चन्दामामा
मई १९७३

चन्दामामा
संस्थापक : नागिरेड्डी
संचालक : 'चक्रपाणी'
इस महीने की बेताल कथा "परिवर्तन" के द्वारा हमें यह विदित होता है कि राजा और प्रजा के बीच एक प्रकार का मधुर संबंध होना चाहिए, वरना राजा के द्वारा किये जानेवाले अच्छे कार्य भी जनता की दृष्टि में बुरे मालूम हो सकते हैं। जनता में स्वार्थ हो, तब राजा देश के हित के लिए जो कार्य करते हैं वे जनता में द्वेष पैदा करते हैं, मगर जब वे शासन के विधान से परिचित हो लेते हैं, तब वे राजा के कार्यों की अच्छाई को समझ पाते हैं।"
वर्ष : २५ मई १९७२ अंक : ११

जीवन ग्रहेण नम्राः,
गृहीत्वा पुन रुन्नताः;
किम् कनिष्ठाः, किमु ज्येष्ठाः
घटीयंत्रस्य दुर्जनाः ? ॥ १ ॥

[प्राण लेते समय दबे रहकर, प्राण लेने के बाद ऊपर उठ आते हैं; (खाली रहते समय नीचे जाकर पानी भरकर ऊपर आनेवाली) ढेंकली के ये छोटे भाई हैं या बड़े भाई ?)

मुखम् पद्मदलाकारम्,
वच श्चंदन शीतलम्,
हृ त्कर्तरिसमम् चाति
विनयम् धूर्त लक्षणम् ॥ २ ॥

[पद्म जैसा मुखमण्डल, चन्दन जैसे शीतल वचन, कैंची जैसा मन, तथा अत्यंत विनय धूर्तों के लक्षण हैं।]

उपकारेण नीचाना
मपकारो हि जायते;
पयःपानम् भुजंगानाम्
केवलम् विषवर्द्धनम् ॥ ३ ॥

[नीच व्यक्तियों का उपकार करने से अपकार ही होता है। जैसे दूध के पीने पर भी साँपों में विष की ही वृद्धि होती है।

दुष्टों की प्रकृति

पद का लोभ

आज से ग्यारह सौ साल पहले की बात है। मध्य चीन के चियांगलिंग नामक नगर में कुवो नामक एक धनी रहा करता था। कुवो के पिता ने व्यापार करके करोड़ों रुपये कमाया था। कुवो ब्याज का व्यापार करके सब से बड़ा धनी बना। बड़े व्यापारी भी उसके यहाँ से कर्ज ले जाते थे।

चांग नामक एक सौदागर ने कुवो से लाखों रुपये उधार में लिया और दूर में स्थित राजधानी नगर में जा बसा। मगर उसने कर्ज नहीं चुकाया। कर्ज वसूल करने के साथ राजधानी नगर की ज़िंदगी का लुफ़्त उठाने का शौक उसके मन में पैदा हो गया। इसलिए कुवो अपनी माँ, बहन और छोटे भाई को नौकरों के हाथ सौंप कर अपने निजी जहाज पर राजधानी के लिए चल पड़ा।

कुवो को चांग का पता बड़ी आसानी से लग गया। क्यों कि राजधानी में आने पर चांग ने धन के साथ नाम भी कमा लिया था। चांग ने ठाठ से कुवो का स्वागत किया और कहा—"मुझे कर्ज चुकाने में देरी हो गयी, इसके अनेक कारण हैं। एक कारण यह है कि मैं यहाँ पर व्यापार में बहुत समय फँसा रहा, मुझे फ़ुरसत तक नहीं मिलती थी। दूसरा कारण यह था कि इतनी भारी रक़म लेकर दूर की यात्रा करना मुझे खतरनाक मालूम हुआ। किसी दूसरे के हाथ देकर इतनी रक़म भेजना भी उचित मालूम न हुआ। तुम्हीं आ गये, बड़ा अच्छा हुआ। तुम्हारा ऋण अभी मूल और ब्याज सहित हिसाब लगाकर चुकाये देता हूँ।"

कुवो ने अपना कर्ज वसूल कर लिया। उसने उस महा नगर में तीन वर्ष सुख भोगों में बिता दिये। धन को पानी की तरह

पद बेच रही है। बगावत को दबाने के लिए सरकार के पास पर्याप्त धन न था। इसलिए जो पद खाली हो गये थे, उन्हें सरकार धन लेकर बेचने लगी थी।

बहानेवाले के पीछे गुड़ के पीछे मक्खियों की भांति कई लोग इकट्ठे हो ही जाते हैं। कुवो को ऐसे लोगों ने घेर लिया। गाना बजानेवालियों तथा मुखस्तुति करनेवालों ने उसका आधा धन खा लिया, तब कुवो ने अपने घर लौटने को सोचा।

लेकिन इस बीच एक विघ्न पैदा हुआ। मध्य चीन के सम्राट के विरुद्ध भगवा पैदा हुआ; सबने कुवो को सलाह दी कि ऐसी हालत में भारी संपत्ति के साथ यात्रा करना मुनासिब नहीं, इसलिए कुवो को राजधानी में ही रहना पड़ा।

इस बीच उसे एक अच्छा समाचार मिला। वह यह कि सरकार धन लेकर

कुवो किसी ऊँची परीक्षा में उत्तीर्ण न हुआ था। इस वजह से उस समय की स्थिति के अनुसार वह छोटे पद के लिए भी योग्य न था। मगर यदि धन देकर पद खरीदे जा सकते हैं तो उसके मन में भी पद पर आसीन होने का लोभ पैदा हुआ।

"मेरे पास पच्चीस-तीस लाख रुपये हैं, मैं किस प्रकार के पद खरीद सकता हूँ?" कुवो ने अपने मित्रों से पूछा।

"तुम सीधे सरकार को यह धन चुका दोगे तो तुम्हें कोई बड़ा पद प्राप्त न होगा। किसी गाँव का न्यायाधिकारी नियुक्त करेंगे। मगर वही धन दरबार के अधिकारियों को रिश्वत दोगे तो तुम्हें किसी नगर का शासक नियुक्त करेंगे।" मित्रों ने सलाह दी।

कुवो ने सोचा कि यदि वह अपने को नगर-शासक कहलाया तो उसका जन्म धन्य हो जायगा। फिर भी उसने पहले चांग की सलाह मांगी।

"दोस्त, तुम्हारे पास जो धन है, उससे नगर के शासक का पद ज़रूर मिल सकता है, मगर वह तुम्हारे लिए लाभदायक न होगा। तुम जब उस पद पर जम करके

धन कमाने की कोशिश करने लग जाओगे, तब कोई न कोई बहाना करके तुम्हें पद से हटायेंगे और वह पद दूसरे किसी व्यक्ति को बेच देंगे।" चांग ने समझाया।

इस पर कुवो ने बताया—"महाशय, मुझे पद के द्वारा धन कमाने की जरूरत नहीं। मेरे घर पर पर्याप्त धन है। मैं यश के वास्ते ही उक्त पद को ख़रीदना चाहता हूँ। यदि मैं दो महीने तक भी सही नगर-शासक बना रहा, तो मेरे बाद की पीढ़ियों को वह यश प्राप्त होगा।"

"जैसी तुम्हारी इच्छा!" चांग ने कहा।

चांग की मदद से कुवो ने एक नगर का शासक-पद प्राप्त किया। इससे कुवो का उत्साह बढ़ गया।

कुछ समय बाद कुवो अपने सभी मित्रों से विदा लेकर घर लौटा, वहाँ का हाल देख उसका कलेजा काँप उठा। वहाँ की नदी पहले की भांति बहती रही है, लेकिन उसके किनारे स्थित गाँव का पता नहीं है, लेकिन वहाँ पर पत्थरों के ढेर लगे हुए हैं। बगावत करनेवालों ने उस गाँव के सभी घरों को उजाड़ दिया था। गाँव के कुछ लोगों को मार डाला, बाक़ी लोगों को अपने गुलाम बनाकर पकड़ कर ले गये थे।

कुवो अपने घर की जगह का पता नहीं लगा पाया। उसे मालूम हुआ कि बगावत करनेवाले उसके भाई को मारकर उसकी बहन को उठा ले गये हैं। मगर इस

बात का पता नहीं चला कि बाद को उसकी बहन का क्या हाल हो गया है, यह पता लगा कि उसकी माँ कहीं एक झोंपडी में दूर पर रहती है, कुवो वहाँ गया।

अपने पुत्र को देखते ही बूढ़ी माँ रो पड़ी—"बेटा, तुम्हारे लौटने में थोड़ी और देरी हो जाती तो तुम मुझे प्राणों के साथ न देखते।"

"माँ, हमारी तक़लीफ़ें अब दूर हो गयी हैं, जो कुछ हुआ, सो हुआ! मैंने नगर-शासक का पद प्रप्त कर लिया है। हम दोनों वहाँ जाकर आराम से बाक़ीं दिन बितायेंगे।" कुवो ने समझाया।

ये बातें सुन बूढ़ी का मन उमंग से भर उठा। कुवो ने सोचा कि अपने नये पद को ग्रहण करते समय शादी कर ले, मगर अपने गाँव के उजड़ जाने से वह मौक़ा जाता रहा।

इसके बाद माँ-बेटे एक जहाज़ पर रवाना हो युंग चौ नगर में पहुँचे। वहाँ पर नदी के उत्तरी तट पट बौद्धों का तुषित नामक एक मठ था। उस मठ के सन्यासियों ने एक ऊँचे अधिकारी के आगमन का समाचार सुना, तो उसका स्वागत किया। माँ बेटे को सारा मठ दिखा कर उनका सत्कार किया।

कुवो ने अपने जहाज़ को किनारे स्थित एक बरगद के वृक्ष से बांध दिया और उस रात को वे जहाज़ में ही सो गये। रात को एक भारी तूफ़ान आया जिससे
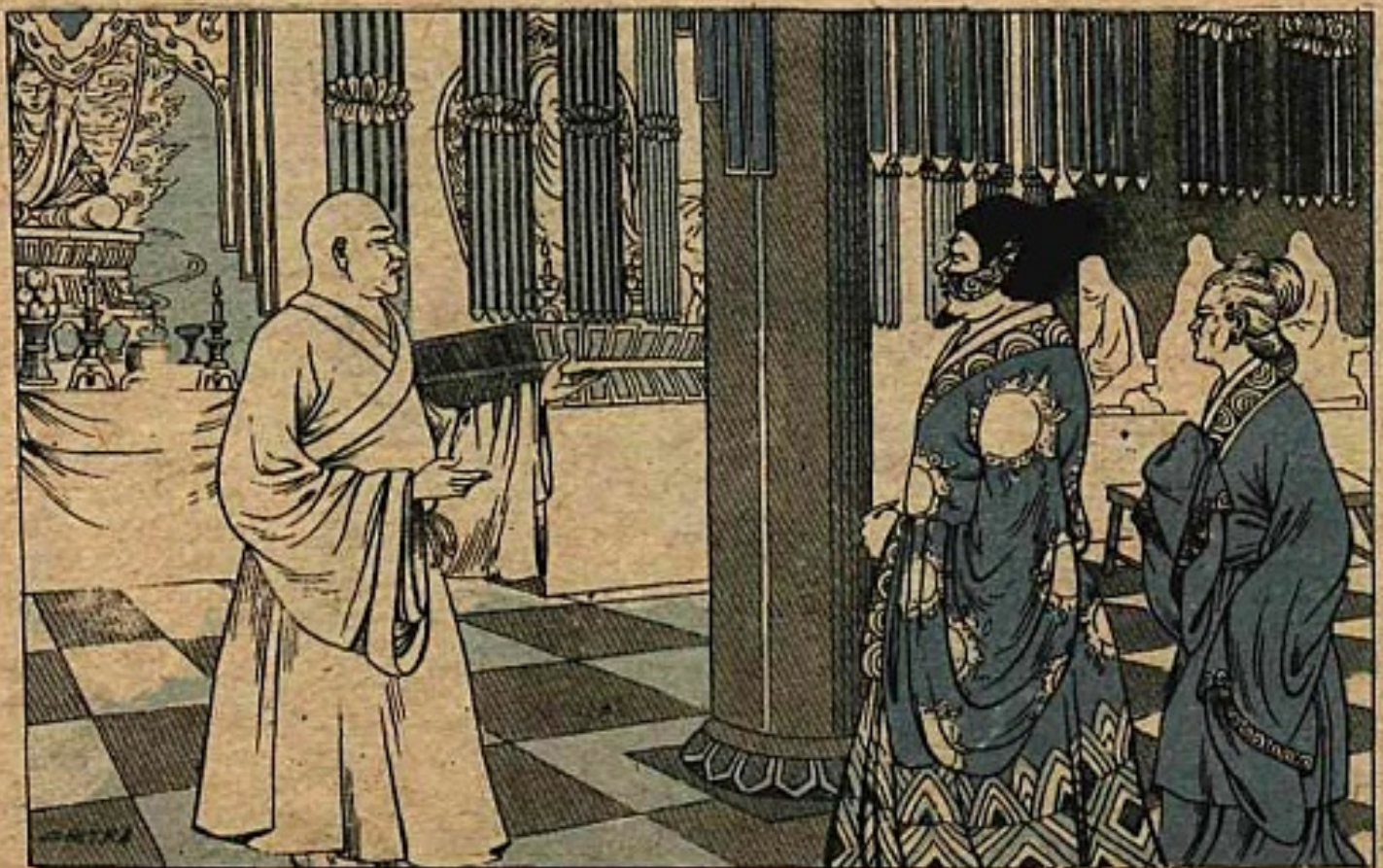
बरगद का वह पेड़ टूटकर जहाज़ पर गिर पड़ा। जहाज़ टूट गया।

कुवो नौका-विद्याएँ सभी जानता था। वह जहाज़ पर से अपनी माँ को बचाकर मठ के पास ले गया। मगर रात का वक़्त होने के कारण मठ के द्वार बंद थे। दर्वाजों पर दस्तक देने पर भी कोई फ़ायदा न रहा, माँ और बेटे रात भर वर्षा में भीगते द्वार के पास रह गये थे।

सवेरा होने पर मठ के द्वार खोले गये। कुवो अपनी माँ के साथ मठ के भीतर पहुँचा। मठ के अधिपति ने पूछा–"चोरों ने तुम लोगों को लूट तो नहीं लिया है न?" कुवो ने जहाज़ के टूट जाने का समाचार मठ के अधिपति को सुनाया।

मठ के अधिपति ने उन माँ-बेटों को एक कमरा दिखाया। कुवो की मांग पर वहाँ के नगर-शासक को एक आदमी के द्वारा खबर भेजी। मगर कुवो की माँ बीमार पड़ गयी और मर गयी।

वहाँ के नगर-शासक ने कुवो की सब तरह से सहायता की और कुवो की माँ की अंत्यक्रियाएँ ठाठ से संपन्न कीं।

लेकिन इसके बाद एक और नयी मुसीबत आ पड़ी थी। चीन के रिवाज के अनुसार माँ की मृत्यु होने से उसका पुत्र तीन साल तक कोई नया पद ग्रहण नहीं कर सकता था। अलावा इसके बौद्ध मठ के सन्यासियों को जब मालूम हुआ कि कुवो का कोई पद नहीं है, उसके पास
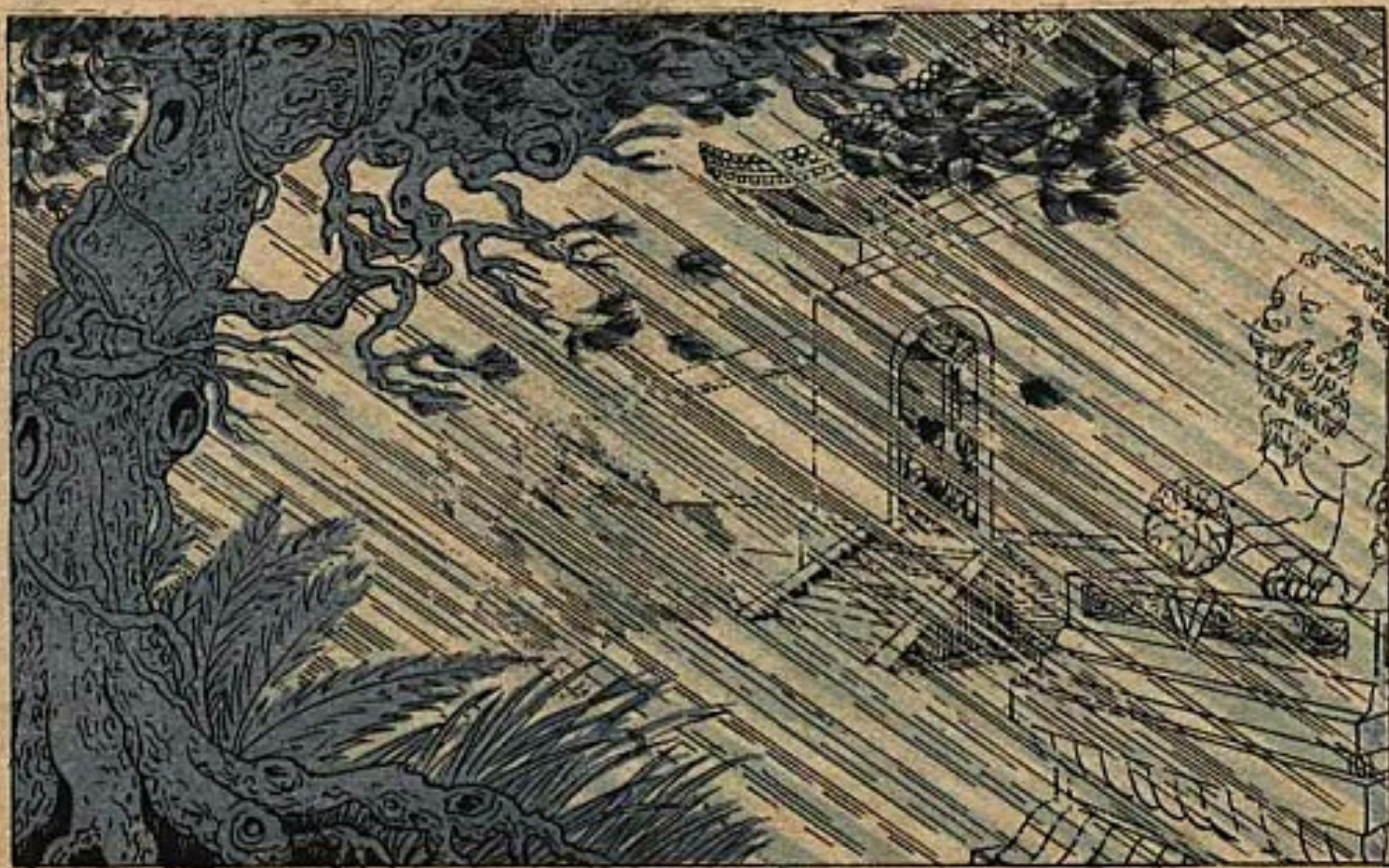
धन भी नहीं और साथ ही उसकी सारी संपत्ति और अधिकार-संबंधी पत्रों के साथ नदी में डूब गयी है, तब उन सन्यासियों ने कुवो को अपने मठ से निकाल दिया ।

इस कारण कुवो को युंग चौ के बंदरगाह के अधिकारी के घर आश्रय लेना पड़ा । फिर भी बंदरगाह के नाविक उसे खिलाना-पिलाना पसंद नहीं करते थे ।

"मैं नगर का शासक होने जा रहा हूँ । तुम लोगों का मेरी बेइज्जती करना ठीक नहीं है ।" कुवो ने नाविकों से कहा ।

"चाहे तुम चक्रवर्ती भी क्यों न हो, जिसके कोई पद न हो, उसे खाना तक नहीं मिलता है ।" नाविकों ने कहा ।

कुवो को अब अपने दिन काटना मुश्किल मालूम हुआ । उसने नगर के शासक के पास जाकर मदद माँगी ।

इस पर नगर के शासक ने बताया—"मैंने तुम्हारी हालत पर रहम खाकर एक बार तुम्हारी मदद की । मुझे इस बात का क्या सबूत है कि तुम नगर के शासक नियुक्त किये गये हो? तुम्हारे अधिकार-संबंधी पत्र कहाँ? अगर तुम मुझे इसी तरह सताओगे तो तुम्हें पिटवा दूँगा, यहाँ से चले जाओ ।"

कुवो ने बंदरगाह के अधिकारी के पास लौटकर पूछा—"मेरी जीविका कैसे चलेगी?"

"तुम क्या काम कर सकते हो? जो काम करोगे, वही तुम्हारी जीविका कमायेगा ।" अधिकारी ने कहा ।

"सिवाय नाव चलाने के मैं कोई दूसरा काम नहीं जानता ।" कुवो ने कहा ।

बंदरगाह के अधिकारी ने उसे नाव चलाने का काम सौंपा । इस तरह तीन साल बीत गये । इस बीच कुवो नाविक की कला में कुशल बना । उसने नगर-शासक के पद को स्वीकार करने का प्रयत्न नहीं किया । उसके मन में पद के प्रति मोह जाता रहा । इस लोभ के दूर होने पर उसे नाविक की ज़िंदगी ही बड़ी अच्छी लगी और वह इसी काम में स्थिर हो गया ।

यक्ष पर्वत

[११]

[खड्गवर्मा और जीवदत्त को उस पहाड़ी प्रदेश मे लुटेरों के साथ रहनेवाला स्वर्णाचारी दिखाई दिया। उसके साथ वे दोनों पहाड़ के ऊपर पहुँचे। उस वक्त एक लुटेरा उनके पास दौड़ा आया और बताया कि उसका नेता समरबाहु जंगल में शिकार खेलने गया तो आदिवासियों ने उसे बन्दी बनाया है। बाद–]

लुटेरे की बातें सुनने पर खड्गवर्मा और जीवदत्त को बड़ा आश्चर्य हुआ। इतने दिन वे दोनों जंगल में घूमते रहें, मगर उन्हें कहीं भी मनुष्यों को खानेवाली जाति के लोग दिखाई नहीं दिये।

जीवदत्त पल-भर मौन रहा, तब लुटेरे से बोला–"तुम्हारे नेता को वे लोग जला कर खा लेंगे या कच्चा चबायेंगे, यह बात हम बाद को सोचेंगे, लेकिन पहले हमें यह बता दो कि असल में बात क्या हुई? और वह कैसे बन्दी बना?"

"हुज़ूर, हम लोग सबेरे ही उठकर जंगल में शिकार खेलने गये, हमे एक हिरन दिखाई दिया, उसे मार कर हम घर लौट रहे थे। रास्ते में हमें एक जगह बाघ के गरजने तथा एक आदमी की चिल्लाहट सुनायी दी। हम तीनों उस दिशा में बढ़े जिस ओर से आवाज़ सुनायी

हमें बन्दी बनाया। आदिवासियों का नेता अपने चेहरे पर भालू के सरवाला चमड़ा पहने हुए था जिससे उसका चेहरा हमें साफ़ दिखाई नहीं दिया। उसने मेरी ओर देखते अपने अनुचरों से कहा–"अबे, इसने बाघ के बच्चे को बड़ी होशियारी से पकड़ लिया है, यह बड़ा ही अक्लमंद और हिम्मतवर मालूम होता है। इसको हम अपने दल में मिला लेंगे, इसे भालू के चमड़े पहना दो।" इसके तुरंत बाद उसके दो अनुचरों ने मुझे भालू की खाल पहना दी। मेरे नेता और मेरे एक साथी को रस्सियों से बांध दिया। मुझे बाघ के बच्चे के साथ उनके साथ चलने की आज्ञा हुई। तब मैं..."

लुटेरे की बातों को बीच में ही काटते हुए जीवदत्त ने कहा–"अरे तुम क़िस्मतवर हो। उस दल के साथ ही रह जाते तो तुम कभी न कभी उन आदिवासियों का नेता बन जाते।"

ये बातें सुनकर खड्गवर्मा के साथ स्वर्णाचारी के साथ आये हुए सब लोग ठहाके मार कर हँस पड़े। लुटेरा भी मुस्कुरा उठा और बोला–"थोड़ी दूर जाने पर मैंने बाघ के बच्चे को उस दल के नेता पर फेंक दिया। बाघ का बच्चा नेता के कंधों पर गिर पड़ा और क्रोध में

दी। एक जगह हमें एक आदिवासी और एक बाघ दिखाई दिये। आदिवासी बाघ के पैरों के नीचे दबा मरा पड़ा था। बाघ के कलेजे में भाला चुभा था। बाघ का एक बच्चा पास में गरज रहा था।" लुटेरे ने कहा।

"शायद वह मरी हुई बाघिन का बच्चा होगा। हाँ, इसके बाद क्या हुआ?" जीवदत्त ने पूछा।

"मेरे नेता ने बताया कि उस बच्चे को ले जाकर पालेंगे, मैंने धीरे से जाकर उसे पकड़ लिया। इतने में दस-बारह आदिवासी जो भालू के चमड़े धारण किये हुए थे, अचानक हम पर टूट पड़े और

आकर उसका गला दबोचने लगा। इस पर वह बाघ के बच्चे के साथ जूझने लगा। तभी उसके अनुचर अपने नेता की मदद करने के लिए उसके निकट गये। मुझे डर लगा और मौक़ा पाकर में यहाँ भागा-भागा आया हूँ।"

"वाह, तुमने तो बड़ी हिम्मत का काम किया है।" यों कहते जीवदत्त स्वर्णाचारी की ओर मुड़कर बोला–"स्वर्णचारी, क्या हमें आदिवासियों के पड़ाव पर जाकर लुटेरों के नेता समरबाहू को छुड़ाना होगा?"

स्वर्णाचारी जवाब देने ही जा रहा था, तभी एक ऊँची शिला पर खड़े हो जंगल की ओर देखनेवाला एक लुटेरा उछल कर नीचे कूद पड़ा, खड्गवर्मा और जीवदत्त के पास आकर बोला–"साहब, हमारे इस पहाड़ के नीचे के जंगल में बहुत से आदिवासी डफली और बाजे बजाते भालुओं को नचाते आ रहे हैं।"

"क्या वे लोग हमारी ओर आ रहे हैं या जंगल में अपने रास्ते जा रहे हैं?" यों पूछते खड्गवर्मा और जीवदत्त ने जंगल की ओर देखा।

लुटेरे ने जो कुछ कहा था, वह सही था। डफ़ली और बाजे बजाते, नाचते जंगल से होकर गुजरनेवाले आदिवासियों की संख्या दस-बारह से ज्यादा न थी। उनके आगे समरबाहू और उसके एक अनुचर को एक आदिवासी रस्सियों से बांध कर लिये जा रहा था।

"खड्गवर्मा, लगता है कि ये आदिवासी इस पहाड़ की ओर न आकर जंगल में रहनेवाली अपनी बस्ती की ओर जा रहे हैं, यदि ये लोग मनुष्यों को खानेवाले हो तो हम समरबाहू की रक्षा नहीं कर पायेंगे।" जीवदत्त ने कहा।

स्वर्णाचारी ने पहाड़ के नीचे स्थित जंगल की ओर देखा और आदिवासी तथा उनके साथ जानेवाले बन्दी समरबाहू को पहचान कर व्यग्र हो बोला–"हुजूर, आप किसी भी तरह से सही, उन दुष्टों से समरबाहू की रक्षा कीजिये। भालुओं को नचाते, उनके साथ उछलते-कूदते जंगलों में घूमनेवाले इन क्रूर व्यक्तियों के हाथों में समरबाहू ज्यादा दिन ज़िंदा नहीं रह सकता। मुझे लगता है कि ज्यादा देरी करने से समरबाहू की जान खतरे में पड़ सकती है।"

"स्वर्णाचारी, तुम अनुरोध करते हो, इसलिए हम समरबाहू को बचाने की कोशिश करेंगे। उन आदिवासियों का पीछा करते हुए उनकी रक्षा करने में थोड़ा समय लगेगा। इस बीच अगर आदिवासी तुम्हारे नेता को मार डाले तो समझना होगा कि तुम्हारे नेता की क़िस्मत अच्छी नहीं है।"

"हुज़ूर, इसलिए देरी होने से बचने के लिए मैं समरबाहू के अनुचरों को आपकी मदद के लिए भेज देता हूँ। आप लोग उन दुष्टों को यहीं पर मार कर समरबाहू को मुक्त कर दीजिये।" स्वर्णाचारी ने निवेदन किया।

स्वर्णाचारी आगे-पीछे की बातें सोचे बिना आवेश में आकर जो कुछ कह रहा था, उसे सुन जीवदत्त हँसकर बोला–"स्वर्णाचारी, उन दुष्टों का इतनी सरलता से वध करना संभव नहीं है। यदि उन्हें मालूम हो जाय कि हम उन पर हमला करने गये, तो वे लोग भाग सकते हैं। अथवा वहीं पर समरबाहू का वध भी कर सकते हैं।...इसलिए नाहक़ हम वक्त क्यों

बरबाद करें, हम अभी निकल पड़ते हैं। तुम चिंता न करो, हम अपनी ओर से पूरी कोशिश करेंगे।" जीवदत्त ने समझाया।

इसके बाद खड्गवर्मा और जीवदत्त पहाड़ से उतर कर जंगल में पहुँचे। उन्हें आगे जानेवाले आदिवासी तो दिखाई नहीं दिये, लेकिन डफली, तुरही आदि बाजों की आवाज़ उन्हें स्पष्ट सुनायी दे रही थी।

लगभग एक घड़ी तक खड्गवर्मा तथा जीवदत्त तेज़ी से चल कर आदिवासियों के निकट पहुँचे और अचानक पीछे से उस पर बाण चला कर उन्हें तितर-बितर करना चाहा, मगर वे लोग पेड़ों की आड़ में कभी दिखाई देते और दूसरे ही क्षण ओझल हो जाते।

"खड्गवर्मा, भालू की खाल धारण करनेवाले इन लोगों को हमें इनकी बस्ती में ही खतम करना होगा, इसके अलावा कोई दूसरा मार्ग दिखाई नहीं देता। इस घने जंगल में जल्दी जाकर हम इन लोगों से कैसे मिले?" जीवदत्त ने निराश भरे स्वर में कहा।

खड्गवर्मा जीवदत्त के सवाल का जवाब देने ही जा रहा था, तभी दूर पर सुनायी देनेवाली बाजों की आवाज़ अचानक

बंद हो गयी। सारा जंगल एक साथ नीरव हो गया।

"खड्गवर्मा, यह क्या? किसी राक्षस ने एक साथ इन सभी आदिवासियों को निगल तो नहीं डाला? वरना अचानक यह आवाज़ बंद कैसे होती?" जीवदत्त ने विस्मय में आकर पूछा।

"मुझे यह सब कुछ विचित्र मालूम होता है। अब तक हम इन आदिवासियों के द्वारा बजाये जानेवाले बाजों की ध्वनि सुनकर उस दिशा में बढ़ रहे थे, लेकिन अब इनकी खोज़ करके इन्हें कैसे पकड़ ले?" खड्गवर्मा ने भी संदेह प्रकट किया।

इसी वक़्त निकट के पेड़ों के पीछे दो-तीन भेड़ियों के चिल्लाने की आवाज़ सुनायी दी। उस चिल्लाहट को सुनते ही जीवदत्त बोला–"यह तो बड़ा ही अजब लगता है। दिन के वक़्त जब लोगों का आना-जाना होता है, तब भेड़ियों का चिल्लाना कैसे? इसका कोई कारण होगा, चलो, देखेंगे।" यों कहते जीवदत्त घने वृक्षों की ओर बढ़ा।

उन दोनों ने वृक्षों के समीप जाकर ज़मीन को छूनेवाली डालों की आड़ में खड़े होकर आगे की ओर देखा। वहाँ पर उन्हें एक हरा-भरा खेत दिखाई दिया। उसमें से थोड़े हिस्से में तरकारियों के पौधे लगे हुए थे। बाक़ी प्रदेश फल-वृक्षों से सुंदर लग रहा था। मगर उन वीरों को इस खेत ने विशेष आकृष्ट नहीं किया। क्योंकि वहाँ पर चार बेतहज़ीब आदमी फल-वृक्षों तथा तरकारियों के पौधों को पानी से सींच रहे थे और भालू की खाल पहने दो व्यक्ति पेड़ों के नीचे भेड़ियों के साथ आराम से बैठे दिखाई दिये। अब उनकी समझ में आया कि भेड़िये क्यों चिल्ला रहे थे।

"खड्गवर्मा, भालू की खाल पहने ये लोग जंगल की थोड़ी-सी ज़मीन को उपजाऊ बना कर फ़सल पैदा कर रहे हैं। ये लोग जिन आदमियों से खेती का काम करा रहे हैं, वे दूसरी जाति के मालूम होते हैं। शायद वे लोग इनके गुलाम होंगे।" जीवदत्त ने बताया।

"इसमें क्या शक है? लगता है कि इन गुलामों के भागने से पहरा देने के लिए ही ये लोग भेड़ियों से काम लेते होंगे। ये कमबख़्त लोग बीच में आ पड़े, समरबाहू को बन्दी बनाया गया दल कहीं खिसक गया।" खड्गवर्मा ने कहा।

खड्गवर्मा और जीवदत्त यों बात कर ही रहे थे कि तरकारियों के पौधों को पानी सींचनेवाले एक गुलाम ने इधर-उधर झांक कर देखा, पौधों के पीछे छुप कर आगे

बढ़ा। एक पेड़ की छाया में ऊँघनेवाले भालू की खालवाले के निकट गया। उसकी चाल देख खड्गवर्मा और जीवदत्त को संदेह हुआ। इस पर जीवदत्त ने खड्गवर्मा से कहा–"खड्गवर्मा, लगता है कि यह गुलाम भालू की खाल पहने हुए व्यक्ति का अंत करने की कोशिश में है। देखो तो वह..." यों कहते जीवदत्त चुप हो गया।

गुलाम अपने पहरेदार के पीछे गया। पानी के घड़े में से झट एक बड़ा पत्थर निकाला और पहरेदार के सर पर दे मारा। पहरेदार चोट खाकर चीख उठा और आगे की ओर लुढ़क पड़ा। तब गुलाम दौड़ कर जंगल में जा पहुंचा।

अपने साथी पहरेदार की चिल्लाहट सुनकर उसके अनुचर ने उधर देखा, सारी बात जानकर वह गुलाम का पीछा करने लगा। साथ ही पालतू भेड़ियों को उन पर उकसाया। दो भेड़िये भयंकर गर्जन करते गुलाम का पीछा करने लगे। उनके पीछे पहरेदार दौड़ता गया।

"खड्गवर्मा, समरबाहू की क़िस्मत अच्छी रही, इसलिए हम इस ओर आ पहुँचे। तीन गुलाम यहीं पर रह गये। हम इनसे पूछ लें, तो शायद ये लोग भालू की खालवाले लोगों की बस्ती का समाचार दे सकें।" यों कहते जीवदत्त वृक्षों की ओट में से बाहर आया और तरकारियों के पौधों के बीच खड़े हो घबरानेवाले को ज़ोर से पुकारा।

जीवदत्त की पुकार सुनकर गुलाम चौंक पड़े और उसकी ओर देखने लगे। खड्गवर्मा ने हाथ उठा कर उन्हें संकेत किया कि उनके नज़दीक़ आ जावे। इसके दूसरे ही क्षण तीनों गुलाम एक साथ जंगल की ओर भाग खड़े हुए।

जीवदत्त ठठाकर हँस पड़ा और बोला– "खड्गवर्मा, ऐसा मालूम होता है कि हम रास्ता भटक कर इन पागलों के बीच चले आये हैं। अपना पहरा देनेवाला व्यक्ति भागनेवाले गुलाम का पीछा करते जंगल में चले जाने के बाद भी ये तीनों इस तरह तरकारियों के पौधों को पानी देने में मशगूल हैं, मानो कुछ हुआ ही न हो, मगर हमको देखते ही इस तरह भाग खड़े हुए, जैसे भूतों को देख लिया हो।"

"अब हमें क्या करना होगा? भागने वाले गुलाम का पीछा करनेवाले भेड़ियों का गर्जन सुन लिया है न? चलो, देखें, जंगल में शायद समरबाहू को पकड़ कर ले जानेवाले भालू की खालोंवालों के दल का पता लग जाय।" खड्गवर्मा ने सुझाया।

इसके बाद खड्गवर्मा और जीवदत्त दोनों जंगल में आये। वे उस दिशा में गये, जिस दिशा से भेड़ियों का गर्जन सुनायी दे रहा था। थोडी दूर आगे बढ़ने पर उन्हें एक साथ डफली, तुरही इत्यादि बाजों के बजने की आवाज़ सुनाई दी। दोनों ने उस दिशा में सर उठा कर देखा। दूर पर पेड़ों की आड़ में से काला धुआँ ऊपर उठ कर आसमान में फैलता जा रहा था।

"खड्गवर्मा, भालू की खालवाले दल के लोगों ने समरबाहू को जला डालने के लिए शायद आग सुलगा दी हो और यह धुआँ उसीका तो नहीं?" जीवदत्त ने पूछा।

"शायद हो सकता है। हमें जल्दी वहाँ पहुँचना ज़रूरी है।" यों कहते खड्गवर्मा ने म्यान से तलवार निकाली। तब दोनों धुएँ की दिशा में जंगल से होकर भागने लगे। (और है)

परिवर्तन

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतार कर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन्, मैं नहीं जानता कि तुम किसके वास्ते इस आधी रात के वक़्त इस तरह श्रम उठा रहे हो। मगर इस दुनिया में बिना किसी कारण के मित्र भी शत्रु बन जाते हैं और शत्रु मित्र बन जाते हैं। इसके उदाहरण स्वरूप मैं तुम्हें भीम की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: विक्रमपुर का राजा विक्रमवर्मा शासन कार्य में बड़ा ही समर्थ था। वह जनता के सुख-दुखों का अधिक ख्याल रखता था, इसलिए जनता का भी उस पर अपार विश्वास था। अत: राजा के आदेश पर जनता अपने देश की

भलाई के लिए आग में कूदने के लिए भी तैयार रहती थी।

राजा विक्रमवर्मा का यश पड़ोसी राजा देवराज से देखा न गया। देवराज के राज्य की प्रजा अपने राजा से असंतुष्ट थी और पड़ोसी राजा विक्रमवर्मा की तारीफ़ किया करती थी। क्योंकि देवराज के शासन में जनता असंख्य यातनाएँ झेल रही थीं। देवराज युद्ध में विक्रमवर्मा को जीत नहीं सकता था। विक्रमपुर में अराजकता फैलने पर ही देवराज विक्रमवर्मा को हरा सकता था।

इसके लिए देवराज ने एक षड़यंत्र किया। देवराज तथा विक्रमवर्मा के राज्यों के बीच अनेक जंगल थे, जिनमें जंगली जातियों के कई दल रहा करते थे। वे लोग जंगलों में आराम से अपने दिन बिताया करते थे। एक दिन देवराज ने गुप्त रूप से जंगली जातियों के दलों के नेताओं को बुला भेजा और कहा—"तुम लोग जंगली जानवरों से भी बदतर ज़िंदगी बिता रहे हो। तुम लोगों की हालत पर मुझे दया आती है। विक्रमपुर संपन्न है और वह भूतल स्वर्ग जैसा है। वहाँ की संपत्ति को तुम लोग लूट लो, तो तुम्हें रोकने ही वाला कौन है? अगर विक्रमवर्मा अपनी सेना को तुम पर हमला करने भेज दे तो तुम लोग मेरे राज्य में भागकर आ जाओ, मैं तुम लोगों को आश्रय दूंगा। मेरी यही इच्छा है कि तुम लोग अपने पराक्रम का परिचय देकर सुख की ज़िंदगी बितावे।"

देवराज का प्रोत्साहन पाकर जंगल के निवासी लुटेरों के दल बनाकर विक्रमपुर को लूटने लगे।

विक्रमवर्मा ने सोचा कि ये चोरियाँ एक योजना बनाकर की जा रही हैं, इसलिए चोरों को पकड़ने की जिम्मेदारी जनता को सौंप दी। जनता ने भी दल बाँधकर रात के वक़्त पहरा दिया और अनेक चोरों को पकड़ लिया। विक्रमवर्मा ने उन सब चोरों

को देशद्रोही घोषित करके फाँसी पर लटकवा दिया ।

इसके बाद राजा विक्रमवर्मा ने जंगल के निवासियों के पास यह संदेशा भेज दिया— "हम तुम लोगों की आज़ादी में कभी दखल नहीं देंगे । तुम लोग चाहो तो हमारे राज्य के नागरिक बनकर शांति से जी सकते हो, मगर चोर और लुटेरे बनकर हमारे राज्य की सीमा में प्रवेश करोगे तो तुम लोगों को निश्चय ही मौत की सज़ा दी जायगी ।"

इसका परिणाम यह हुआ कि विक्रमवर्मा के राज्य में अचानक चोरियाँ बंद हो गयीं । देवराज की आशा निराशा में बदल गयी । जंगल के निवासियों ने समझ लिया कि विक्रमवर्मा का कहना बिलकुल सही है ।

मगर एक व्यक्ति इसके विपरीत सोचने वाला था । उसका नाम भीम था । विक्रमपुर के समीप में स्थित एक जंगल में भीम और उसका भाई राम रहा करते थे । राम जंगलियों के साथ घूमते उस दल के लोग जो काम करते, वह भी वही काम किया करता था । लेकिन भीम जंगल में लकड़ियाँ काटता, उन्हें विक्रमपुर में बेचकर अपने लिए आवश्यक चीज़ें खरीद कर तब घर लौट आता था, इसलिए वह शहर की ज़िंदगी से भली भाँति परिचित था । शहर में उसके जान-पहचान के लोग और दोस्त भी थे ।

जंगली लोगों के साथ राम भी विक्रमपुर में चोरी करते पकड़ा गया। उसे फाँसी की सजा दी गयी। लेकिन भीम जोशीले स्वभाव का था। अपने भाई को राजा बिक्रमवर्मा ने फाँसी पर चढ़ाया था, इसलिए उसने राजा का वध करके अपने भाई की आत्मा को शांति दिलाने का निश्चय कर लिया।

इस बीच पड़ोसी राजा देवराज ने भी बिक्रमवर्मा का अंत करने का निश्चय किया। जब उसे मालूम हुआ कि विक्रमपुर में अराजकता फैलाना संभव नहीं, तब उसने बिक्रमवर्मा को मार डालने के लिए एक सैनिक दल को एक योद्धा के नेतृत्व में जंगल में नियुक्त किया। एक दिन विक्रमवर्मा अपने थोड़े से सैनिकों के साथ शिकार खेलने जंगल में गया। यह बात मालूम होते ही दुश्मन के सैनिकों ने विक्रमवर्मा का सामना किया। शत्रु सैनिक राजा विक्रमवर्मा के सैनिकों के साथ लड़ रहे थे, तब उस दल का नेता राजा से जूझ पड़ा। दोनों के बीच तलवारों की लड़ाई होने लगी।

भीम को जब मालूम हुआ कि राजा विक्रमवर्मा शिकार खेलने जंगल में गया है, तो वह धनुष और बाण लेकर वहाँ पहुँचा। जब वह राजा के पास पहुँचा, तब राजा किसी योद्धा के साथ तलवार से लड़ रहा था, भीम ने अपने धनुष पर बाण चढ़ाकर राजा पर निशाना लगाये छोड़ दिया। मगर वह बाण राजा को नहीं लगा, बल्कि राजा के साथ लड़नेवाले एक योद्धा को जा लगा और वह वहीं पर ठण्ड़ा हो गया। अपने नेता के नीचे गिरते ही उसके सभी सैनिक भाग गये।

राजा ने भीम को अपने पास बुलाकर उसकी सहायता के लिए कृतज्ञता प्रकट की और उसे अपने साथ राजधानी में ले जाकर उसे अपने अंगरक्षक नियुक्त किया। भीम ने यह सोचकर उस नौकरी को स्वीकार कर लिया कि इस नौकरी के

द्वारा राजा का वध करके अपने भाई की मौत का बदला लिया जा सकता है।

देवराज ने जब देखा कि उसकी दूसरी चाल भी नही चली, तो उसने तीसरी चाल चली। उसने विक्रमवर्मा के सेनापति के पास अपने दूत को भेजकर उसके द्वारा कहला भेजा–"आप अपने राजा का वध करेंगे तो मैं आपको विक्रमपुर की गद्दी पर बिठाऊँगा। राजा के मरने के बाद अगर जनता बगावत कर बैठेगी तो उसे दबाने के लिए हमारी और आपकी सेनाएँ मिल सकती हैं। आपका राज्याभिषेक हो होने के बाद हम मैत्रीपूर्ण समझौता कर लेंगे।"

राज्य के लोभ में पड़कर विक्रमवर्मा के सेनापति ने पडोसी राजा देवराज के वचन पर विश्वास किया और अपने राजा की हत्या करने का उसने निश्चय कर लिया। उसने एक दिन आधी रात के समय राजा के शयनगृह के पास जाकर खबर भेजी कि उसे राजा के साथ जरूरी गुप्त बातें करनी हैं। राजा ने सेनापति को भीतर बुला भेजा।

इस बीच भीम ने राजा की हत्या करने के मौक़े की प्रतीक्षा की, लेकिन उसे कभी ऐसा अच्छा मौक़ा नहीं मिला। आखिर उसने राजा को शयनगृह में अकेले रहते समय मारने का निश्चय कर लिया। सेनापति ने भी राजा के शयनगृह में अकेले रहते समय मारने का निश्चय कर लिया। सेनापति के राजा के शयनगृह में प्रवेश करने के थोड़ी देर

बाद भीम वहाँ पर आ पहुँचा। राजा के अंगरक्षक ने एक बार राजा की रक्षा की थी, इसलिए पहरेदार ने उसे भीतर जाने से नहीं रोका।

भीम ने शयनगृह में पहुँचते ही देखा कि राजा सेनापति का हाथ पकड़े हुए है और सेनापति के हाथ में तलवार है। यही अच्छा मौक़ा मानकर भीम ने राजा पर ज़ोर से तलवार फेंक दी। तलवार जाकर सेनापति के कलेजे में चुभ गयी।

राजा ने भीम की तारीफ़ की और दूसरे दिन दरबार में उसे नये सेनापति के पद पर नियुक्त करने की घोषणा की।

इसके बाद भीम ने अपने भाई की मृत्यु का बदला लेने की इच्छा त्याग दी और राजा के प्रति अत्यंत भक्ति एवं श्रद्धा का भाव रखने लगा।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजन, भीम ने बदला लेने का विचार क्यों त्याग दिया? क्या इसलिए कि राजा ने उसे ऊँचा ओहदा दिया है? या इसलिए कि राजा पर ईश्वर का अनुग्रह है? इस संदेह का समाधान जानकर भी न बताओगे तो तुम्हारा सर टुकड़े-टुकडे हो जायगा।"

इस पर विक्रमार्क ने यों कहा—"भीम के मन में परिवर्तन होने के ये सब कारण नहीं हैं। भीम को धीरे-धीरे यह मालूम हुआ होगा कि राजा का उसके भाई से कोई दुश्मनी नहीं है और देश की रक्षा ही उसका लक्ष्य है। जंगली लोगों ने भी यह नहीं बताया कि राजा ने जो कुछ किया, वह गलत है। राजा ने यह न जानते हुए भी उसे सेनापति के पद पर नियुक्त किया कि असल में वह कौन है? इस पर नगर के लोगों ने भी कोई आपत्ति नहीं उठायी। इसलिए यह मानना होगा कि राजा पर सब तरह के लोगों का विश्वास है, अत: भीम के मन में भी यही विश्वास पैदा हुआ।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

धारणा शक्ति

पंडित जगन्नाथ राय बादशाह शाहजहाँ के दर्शन करने दिल्ली गया और कई दिन तक दरबार के सामने इंतजार करता गया।

जगन्नाथ राय जिस सराय में ठहरा था, उसमें एक दिन दो औरतें झगड़ पड़ीं और केश पकड़कर लड़ने लगीं। इतने में सिपाहियों ने आकर उन्हें अलग किया और झगड़े का कारण पूछा।

"इसी ने मुझे पहले गालियाँ दीं।" दोनों औरतों ने एक दूसरे पर इलजाम लगाया।

"क्या तुम्हारे झगड़े को पहले से देखनेवाला गवाह कोई है?" सिपाहियों ने उन औरतों से पूछा।

औरतों ने पंडित जगन्नाथ राय को दिखाया।

सिपाहियों ने उन तीनों को ले आकर बादशाह के सामने खड़ा कर दिया।

औरतों ने परस्पर उर्दू में गालियाँ दी थीं। पंडित जगन्नाथ संस्कृत और तेलुगु ही जानता था, वह उर्दू नहीं जानता था, फिर भी उसने उर्दू में औरतों की सारी बातचीत पहले से आख़िर तक ज्यों की त्यों सुना दी।

बादशाह और दरबारी भी अचरज में आ गये। जगन्नाथ राय की धारणा शक्ति पर प्रसन्न ही शाहशाह ने उसे अपने दरबारी कवि नियुक्त किया।
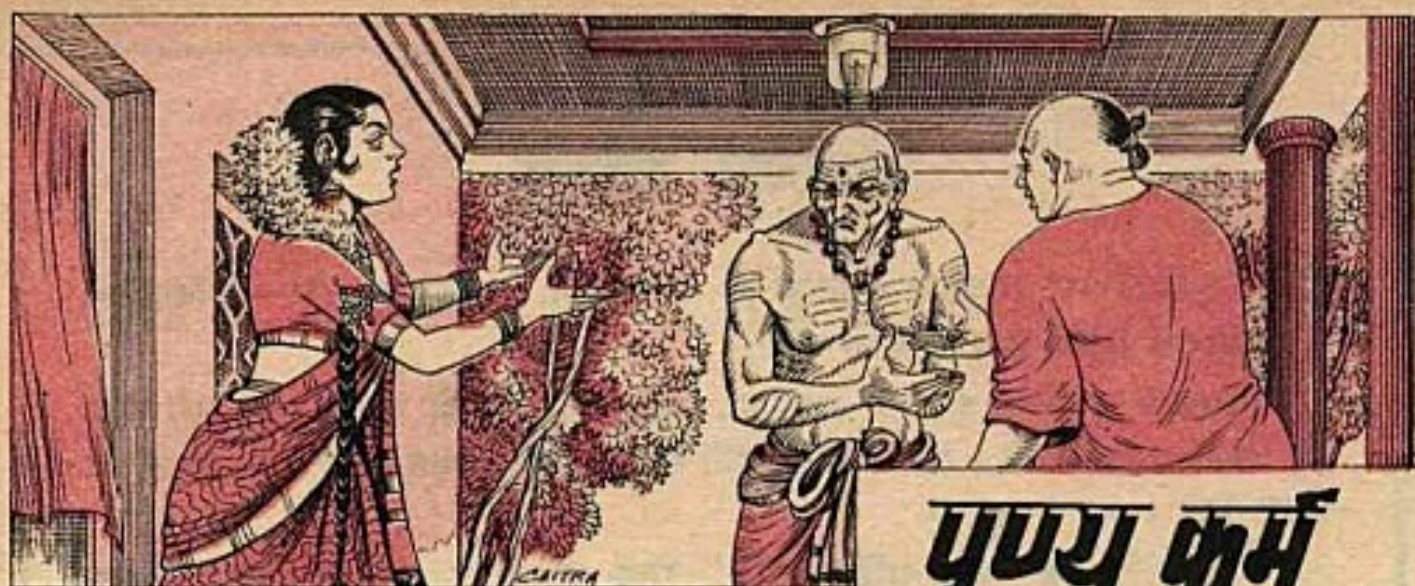
पुण्य कर्म

प्राचीनकाल में अक्षयपुर में एक नगरश्रेष्ठि रहता था। उसका नाम धर्मपाल था। उस सेठ की पत्नी का नाम सुलक्षणा था। उनके पाँच पुत्र थे। उस सेठ को व्यापार में अपार धन प्राप्त होता था। तुलसी, अश्वत्थ एवं आमलक वृक्षों की वे पूजा करते थे।

धर्मपाल और उसकी पत्नी नित्य किसी निर्धन को एक स्वर्ण आमलक दान करके ही अन्न जल ग्रहण करते थे।

जब उनके बड़े पुत्र का विवाह हुआ तो बड़ी बहू ने अपनी सास को स्वर्ण आमलक दान देने से रोक दिया और कहा—"माताजी, अगर आप इतना स्वर्ण नित्य दान करते रहेंगे तो फिर हम लोगों के लिए क्या रह जायेगा? आपको रजत आमलक दान देना उचित है।" उस वृद्ध दम्पति ने नयी पीढ़ी के इस सुझाव पर सन्तोष कर लिया और रजत आमलक दान देना आरंभ किया।

जब दूसरी बहू आई तो उसने रजत आमलक दान देने से रोक दिया और कहा—"माताजी, इतनी चाँदी लुटाते रहने से घर में भला क्या रह जायेगा? आप ताम्र आमलक दान दें तो अच्छा रहे।"

उन दोनों ने अपनी आयु के अनुसार फिर अपनी भावनाओं पर नियंत्रण किया और ताम्रधातु का आमलक दान देना आरंभ किया।

जब तीसरी बहू आई तो उसने ताम्र आमलक का दान भी पसंद नहीं किया और कहा—"माताजी, घर की स्थिति ऐसी नहीं है कि ताम्र ऐसी सुधातु दान में दे डाली जाय। अच्छा हो, इसकी जगह आप लोग लौह आमलक ही दान दिया करें।"

योगेश श्रीवास्तव

सेठ और सेठानी मन मारकर चुप रह गये और नित्य एक लौह आमलक दान देने लगे। घर में व्यापार की स्थिति अच्छी नहीं थी। सभी लड़के आलसी थे और बहुएँ कामचोर हो गईं थीं। घर में धीरे धीरे निर्धनता आ रही थी।

जब चौथी बहू आई तो उसने लौह आमलक देने पर भी आपत्ति की और कहा–"माताजी, जितनी धातु आप लोग दान में दे रहे हैं, उससे यदि व्यापार किया जाये तो घर का कुछ लाभ हो! आप लोगों को अपना परलोक बनाने के लिए अपने बच्चों का लोक नहीं नष्ट करना चाहिए। अगर आपको दान करना ही है तो आप रोज़ एक आटे का आमलक बना लें और दान दे दिया करें।" उन दोनों ने इस पर भी सन्तोष कर लिया। लेकिन जब पांचवीं बहू ने आकर इस पर भी आपत्ति की तब तो वे लोग अत्यन्त दुखी हुए और वे दोनों तीर्थाटन का बहाना करके घर से चले गये।

वास्तविकता यह थी कि बेटों में बहुत अकर्मण्यता आ गई थी। वे कोई उद्योग नहीं करते थे और न उन्होंने शिक्षा ही ग्रहण की। धन देखकर उनके मन में उसे बैठे बैठे खाने की इच्छा जागृत हो गई। श्रम के बिना खाया गया अन्न चोरी का अन्न कहलाता है। इस प्रकार की वृत्ति हो जाने के कारण उनमें सदाचार का अभाव हो गया और घर श्रीहीन हो गया।

उधर दोनों वृद्ध पति-पत्नी सरयू नदी के तट पर एक वन में रहने लगे। वहाँ रहकर उन्होंने आमलक वृक्ष के गुणकारी फलों की आयुर्वेद औषधियाँ बनाकर उद्योग आरंभ कर दिया। कुछ स्थिति सुधरते ही फिर उन्होंने दान-धर्म आरंभ कर दिया। अपने कर्म के श्रम से और धर्म के बल से वे लोग फिर धनाढ्य हो गये। उन्होंने एक विशाल मंदिर तथा भवन बनवाना आरंभ किया।

उधर उनके बेटों और बहुओं की नीयतें और आदतें ऐसी बिगड़ चुकी थीं कि वे भिखारी हो चले थे। उन्हें मेहनत-मजदूरी करके पेट पालना पड़ रहा था। जिस समय सरयू तट पर प्रियंका नगरी में विशाल मंदिर बन रहा था, सेठ के लड़के उसमें मजदूरी कर रहे थे और बहुएँ वहीं पत्थर कूटने आया करती थीं।

एक दिन सुलक्षणा की दासियाँ रजत आमलक का दान उसी की छोटी बहू को दे आईं। उस रजत आमलक को हाथ में लेकर वह रोने लगी और कहने लगी—"मेरी सास भी इसी तरह दानी थीं, उनकी हथेली के मध्य में तिल था। हम लोगों के कुकर्मों और दुष्पापों के कारण मेरे सास-ससुर हम सबको छोड़कर चले गये। क्या जाने वे लोग कहाँ हैं?"

यह बात दासियों ने भवन में सुलक्षणा तक पहुँचा दी। सुलक्षणा को स्थिति समझने में अधिक देर नहीं लगी। उसने उन पाँचों मजदूर स्त्रियों को और उनके पतियों को भवन में बुलवाया। लड़कों के केश कटवाकर उन्हें स्नान करवाया और अच्छे सुगंधित वस्त्र पहनवाए। बहुओं को नहलवाया। उनकी वेणियाँ पुष्पों से सजवाईं, सुंदर परिधान एवं आभूषणों से अलंकृत किया।

उसके बाद वे पति-पत्नी अपने परिवार को गले लगाकर मिले। इस बार नई पीढ़ी को शुभ कर्मों के आचरण की ऐसी सीख मिल चुकी थी कि उन सबों ने अपने अवगुण त्याग दिये और मिल-जुलकर रहने लगे।

बेगारी मुआफ़!

कई साल पहले की बात है। हंगरी का राजा अपनी जनता से बेगारी लेता था। एक बार एक नहर खोदने के लिए देश के सभी मर्दों को बुलावा आया। सब लोग मन ही मन कुढ़ते फावड़े लेकर नहर खोदने लगे।

दुपहर के वक्त सब लोग काम रोककर खाना खा रहे थे, तब एक मुसाफ़िर ने उनके पास आकर कहा–"तुम सब लोग मुझे एक एक सिक्का दोगे तो तुम्हारी बेगारी के रद्द होने का उपाय बताऊँगा।"

इस पर सब ने उस मुसाफ़िर को एक-एक सिक्का दे दिया।

"एक सिक्का नहीं, एक और दो।" मुसाफ़िर ने कहा। सब ने खीझकर एक एक सिक्का और दे दिया।

"यह भी काफ़ी नहीं, एक सिक्का और दो।" मुसाफ़िर ने फिर कहा।

इस पर लोग गुस्से में आ गये और फावड़े उठाकर मुसाफ़िर को मारने दौड़े।

"यह काम तुम लोग जिस दिन कर सकोगे, उसी दिन तुम्हारी बेगारी रद्द हो जायगी। लो, अपने अपने सिक्के।" यों सिक्के लौटाकर मुसाफ़िर चला गया।

१८४८ में लोगो ने बगावत करके अपनी बेगारी रद्द करवा ली।

उड़न खटोला

[४]

कमर आक्मार अपने उड़न खटोले पर तेजी के साथ यात्रा करके सना नगर पहुँचा। वह राजमहल पर उतरा और शहज़ादी के शयनगृह में पहुँचा।

खोजा हमेशा की भाँति द्वार को रोके लेटकर सो रहा था। कमर ने बड़ी ख़ूबी के साथ उसे पार किया। चुपचाप जाकर दर्वाजे के पर्दे के पीछे रुक गया। भीतर से उसकी प्रेयसी के रोने की आवाज सुनायी दे रही थी।

शहज़ादी की सहेलियाँ उसे समझा रही थीं—"तुम्हारी फ़िक्र तक जो नहीं करता, उसके वास्ते तुम क्यों रोती हो?"

"यह तुम क्या कहती हो? मैं जिस शहज़ादे से प्यार करती हूँ, क्या वह मुझे भूल जायेंगे? यह कभी नहीं हो सकता।" यों कहते शहज़ादी रोने लगीं।

शहज़ादी को रोते देख कमर का कलेजा पसीज उठा। वह पर्दा हटाकर भीतर पहुँचा। धीरे जाकर शहज़ादी का स्पर्श किया। शहज़ादी ने आँखें खोलकर कमर को देखा, तब कमर ने पूछा—"प्यारी, रोती क्यों हो?"

वह उठ खड़ी हुई। उसके कंठ में अपने दोनों हाथ डालकर बोली—"तुम्हारे ही वास्ते रो रही हूँ। मुझे छोड़कर तुम कहाँ चले गये?"

"तुम्हारे बाप ने मेरे साथ कैसा दगा दिया है? तुम्हारे वास्ते मैंने उनको जान से छोड़ दी, वरना मेरी तलवार की बलि दे देता!" कमर ने कहा।

"तुमने क्या यह नहीं सोचा कि मुझे छोड़कर चले जाओगे तो मेरा हाल क्या होगा?" शहज़ादी ने कमर से पूछा।

"तुम मुझसे प्यार करती हो, इसलिए मैं तुम्हें जो कुछ करने को कहूँ, क्या करने के लिए तैयार हो?" कमर ने शहज़ादी से पूछा।

"तुम जो भी करने को कहोगे, मैं जरूर करूँगी।" शहज़ादी ने जवाब दिया।

"मुझे इस वक़्त भूख सता रही है, खा-पी चुकने के बाद आराम से बात कर लेंगे।" कमर ने कहा।

शहज़ादी ने अपनी दासियों को भेजकर खाने-पीने की चीज़ें मँगवायीं। वे दोनों खाना खाकर बात कर ही रहे थे कि सवेरा होने को हुआ। खोजा के जागने के पहले ही वहाँ से चले जाने के ख्याल से कमर उठ खड़ा हुआ।

"कहाँ जा रहे हो?" शहज़ादी ने पूछा।

"मैं अपने देश को जा रहा हूँ। हफ़्ते में एक बार आकर तुम्हें देख जाऊँगा।" कमर ने जवाब दिया।

शहज़ादी ने रोते हुए कहा—"तुम्हारा पुण्य होगा, तुम मुझे अपने साथ जहाँ चाहो, ले जाओ। मैं तुम्हारे विरह को सह नहीं सकती।"

कमर ने खुशी में आकर पूछा—"क्या तुम सचमुच मेरे साथ चलोगी? तब तो

चलो।" यों कहते उसका हाथ पकड़कर उठाया। शहज़ादी ने एक पेटी में से क़ीमती गहने निकाले। उन सब को पहनकर कमर के साथ चल पड़ी। उसकी दासियों ने शहज़ादी को रोकने की हिम्मत नहीं की। वे चुप रह गयीं।

कमर शहज़ादी के साथ महल की छत पर गया। वह घोड़े पर सवार हुआ, शहज़ादी को भी घोड़े पर बिठाया, दोनों के शरीरों को रस्सी से बाँध लिया। तब आसमान में उड़ा। इस दृश्य को देख दासियाँ चिल्ला उठीं। ये चिल्लाहटें सुनकर सुलतान और उसकी बीबी भी जाग पड़ीं, दोनों छत पर आ पहुँचे।

तब तक उड़नखटोला आसमान में ऊपर उड़ रहा था, सुलतान ने चिल्लाकर कमर से कहा–"हमारी बेटी को मत ले जाओ, हम पर मेहर्बानी करो।"

कमर ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। मगर उसे शक हुआ कि कहीं शहजादी अपने माँ-बाप के वास्ते व्याकुल हो जायगी। यह सोचकर उसने शहजादी से पूछा–"क्या तुम अपने माँ-बाप के पास जाना चाहोगी?"

"मैं तुम्हारे साथ ही रहना चाहूँगी, मेरे माँ-बाप की मैं चिंता नहीं करती।" शहजादी ने जवाब दिया।

ये बातें सुन कमर बड़ा खुश हुआ और घोड़े को तेज़ी के साथ चलाने लगा। जल्द ही वे लोग आधी दूर तय कर चुके थे। तब कमर ने अपने उड़न खटोले को एक सुंदर मैदान में एक नहर के पास उतार दिया। वहाँ पर दोनों ने खाना खाया। थोड़ी देर विश्राम किया। फिर रवाना होकर सवेरा होने तक साबूर की राजधानी के निकट आ पहुँचे।

कमर ने सोचा कि उसकी प्रेयसी अपने पिता के नगर के वैभव को देख विस्मय में आ जायेगी। तब उसने अपने उड़न खटोले को नगर की चहर दीवारी के बाहर एक बगीचे के बीच उतार दिया। वहाँ के एक मण्डप में शहजादी को ले गया। वह मण्डप अपने लिए सुलतान ने बना लिया था जिसमें वह रोज सैर करने आया करता था।

"तुम थोड़ी देर यहीं पर बैठ जाओ। मैं अपने बाप के पास जाकर उन्हें हमारे आने की खबर दूँगा।" कमर ने शहजादी से कहा। उसने शहजादी से यह भी बताया कि वह उसके वास्ते एक महल तैयार करवा देगा और उसे बुला लाने के लिए एक आदमी को भेजेगा, तब तक वह उड़न खटोले की देखभाल करते वहीं पर रहे। यों कहकर कमर राजधानी में चला गया।

शहजादी यह सोचकर फूली न समायी कि राजधानी में उसका जुलूस निकाला

जायगा और तब उसे राजमहल में ले जाया जायगा ।

उधर राजमहल में अचानक अपने पुत्र को देख सुलतान साबूर उछल पड़ा । वह खुशी के आंसू गिराते अपने बेटे को मीठे शब्दों में डांट बैठा ।

"जहाँपनाह! जानते हैं कि मैं अपने साथ किसको लाया हूँ? सना की शहजादी को ले आया हूँ । फ़ारस और अरब में भी ऐसी खूबसूरत युवती नहीं है । उसे मैंने हमारे नगर के बाहर उद्यान में उतार दिया है । उसका जुलूस इस तरह निकालना है कि वह भी चकित रह जाय और हमारे राज्य के वैभव का भी उसे पता चले, इसके लिए जरूरी इंतज़ाम करवा लीजिये ।" कमर ने अपने बाप से कहा ।

"यह कौन बड़ा काम है?" साबूर ने जवाब दिया । इसके तुरंत बाद राजधानी नगर को अलंकृत करने और वैभव के साथ जुलूस निकालने का सारा इंतज़ाम करने का आदेश दिया । सशस्त्र सैनिक और वाद्यवृंद भी तैयार हो गये । औरतें और बच्चे भी जुलूस में जाने के लिए अपने को अलंकृत करने लगे ।

कमर ने अपनी बीबी के वास्ते क़ीमती गहने चुनकर लिये । लाल, पीले और हरे

वस्त्रों का चन्दोबा तैयार कराया । उसमें मणियों से निर्मित सोने का सिंहासन तैयार कराया । आसन के चतुर्दिक गुलामों को खड़ा करवाया । उसे ढोने के लिए नीग्रो गुलामों को नियुक्त किया ।

पैदल चलकर जुलूस के उद्यान में पहुँचने में देरी हो जायगी, यह सोचकर कमर तेज़ चलनेवाले एक घोड़े पर सवार हो शहजादी के पास उद्यान में लौट आया ।

मगर कमर को उद्यान में कहीं न उड़न खटोला दिखायी दिया और न शहजादी ही । उसका दिल घबरा उठा । वह पागल की भांति ज़ोर से शहजादी का नाम लेकर पुकारते सारे उद्यान में दौड़ने लगा ।

उसने अपने कपड़े फाड़ डाले। थोड़ी देर बाद जब उसका मन शांत हुआ, तब वह सोचने लगा–"शहजादी तो उड़न खटोले को उड़ाने का तरीक़ा नहीं जानती, न मैंने उसे उसके रहस्य बताये। इसलिए वह घोड़े पर उड़ी न होगी, उस उड़न खटोले को तैयार करनेवाला ही अचानक इधर आया होगा, शहजादी को देख मुझसे बंदला लेने के लिए उसे उड़न खटोले पर कहीं ले गया होगा।"

दूसरे ही क्षण वह उद्यान के पहरेदार के पास गया और उससे पूछा–"क्या कोई उद्यान में आया था?"

"फारस का पंडित जड़ी-बूटियों की खोज में भीतर गया है, लेकिन वह अब तक बाहर नहीं आया। उसके अलावा कोई बगीचे के अन्दर आया नहीं।" पहरेदार ने बताया।

कमर को मालूम हुआ कि फारस का पंडित ही शहजादी को उठा ले गया है, वह चिंता में डूब गया और जुलूस के आगे जाकर सारी बातें अपने बाप को सुनायीं। तब कहा–"अब्बाजान, आप इस जुलूस को वापस ले जाइये। मैं फारस के पंडित को मारकर शहजादी के साथ वापस लौट आऊँगा, तब तक मैं राजधानी को नहीं लौटूंगा।"

सुलतान साबूर विकल हो कहने लगा–"बेटा, तुम मुझे क्यों परेशान करते हो? जो हुआ, सो हो गया। तुम जिस देश की
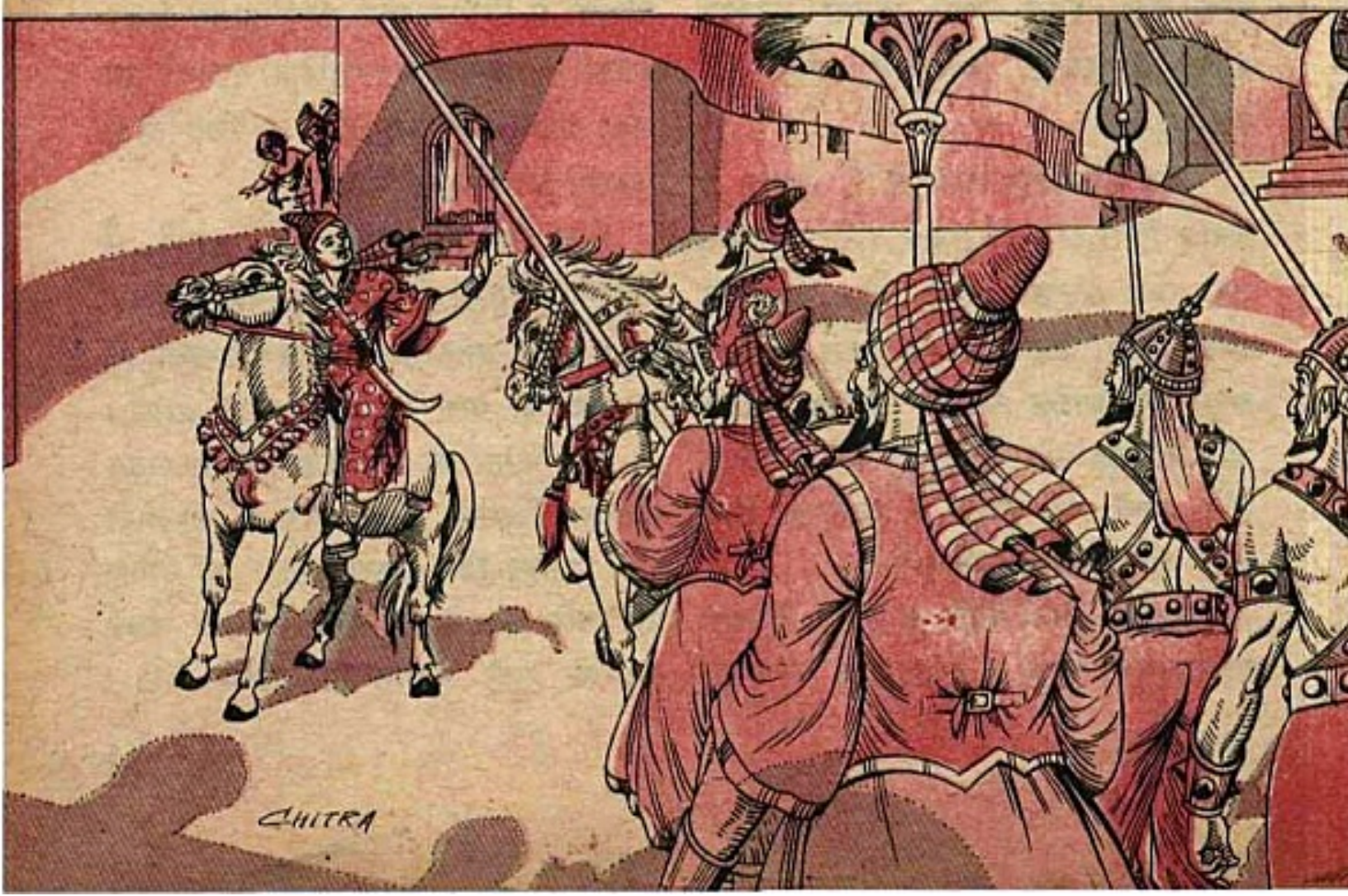
शहजादी के साथ शादी करना चाहोगे, उसी के साथ में तुम्हारी शादी का इंतजाम करूँगा।"

मगर कमर ने अपने बाप की बातों पर ध्यान नहीं दिया। "फिर मिलूँगा।" यह कहकर घोड़े पर सवार हो चल पड़ा।

सुलतान रोते-कलपते अपने महल को लौट आया। राजमहल फिर शोक में डूब गया।

फारस का पंडित उस दिन उद्यान में जड़ीबूटियों की खोज में ही गया था। लेकिन बगीचे में कस्तूरी, अगर-चंदन आदि की खुशबू आते देख वह उस ओर गया! उसने देखा कि मण्डप में शहजादी बैठी हुई है। उसके पास ही उसके द्वारा तैयार किया हुआ उड़न खटोला है। उड़न खटोले को खोने के बाद उस पंडित को बिल्कुल नींद न आती थी और न वह ठीक से खाता-पीता था। आज उसे देख उसका दिल खुशी से नाच उठा।

पहले बूढ़े पंडित ने सोचा कि अपना उड़न खटोला लेकर भाग जाय, मगर उसके मन में शहजादी के बारे में जानने की इच्छा हुई। मण्डप में जाकर उसने झुककर शहजादी को सलाम किया।

शहजादी ने सर उठाकर बूढ़े को देखा और पूछा–"तुम कौन हो?"

"बेटी, शहजादा कमर ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है। नगर के समीप में एक और मण्डप है। वहाँ तक तुम्हें लाने को

बताया है। क्योंकि आज तुम्हारी सास की तबीयत कुछ अच्छी नहीं है। वे खुद तुम्हारा स्वागत करना चाहती हैं। इसलिए तुमको निकट बुला लाने के लिए मुझे भेज दिया है।" बूढ़े ने समझाया।

"तो शहजादा कमर कहाँ?" शहजादी षम्स ने पूछा।

"वे भी सुलतान के साथ जल्द ही जुलूस को लेकर पधारनेवाले हैं।" बूढ़े ने कहा।

"मुझे लिवा लाने के लिए उन्हें क्या तुम जैसे बदसूरत को छोड़ कोई अच्छा आदमी नहीं मिला?" शहजादी ने बूढ़े से पूछा।

"बेटी, यह बात सच है कि राजमहल में मुझसे ज्यादा बदसूरत आदमी कोई नहीं है, लेकिन मेरी बदसूरत को देखते मेरी शक्तियों पर शक न करो। तुम आज नहीं तो कुछ समय बाद जरूर मेरी शक्तियों से परिचित हो जाओगी। मैं बदसूरत और बूढ़ा हूँ, इसलिए शहजादे ने मुझे यहाँ पर भेजा होगा। राजमहल में कई सुंदर युवक हैं, मगर शहजादे को उन्हें तुम्हारे पास भेजना शायद पसंद न हो।" फ़ारस के पंडित ने समझाया।

शहजादी ने बूढ़े की बातों पर यक़ीन किया और बूढ़े का हाथ पकड़कर उठ खड़ी हुई, तब बोली–"तुम मुझे कैसे ले जाओगे?"

"तुम लोग जिस उड़न खटोले पर आये हो, वह यहीं पर है न?" बूढ़े ने जवाब दिया।

"मैं नहीं जानती कि उसे कैसे चलाया जाय?" शहजादी ने कहा।

"मैं उसे चलाऊँगा।" यों कहते बूढ़ा उड़न खटोले पर बैठ गया। शहजादी को अपने पीछे बिठाकर उसे अपने शरीर के साथ बाँध दिया, तब उसने घुंड़ी दबायी।

उड़न खटोला तेज़ी के साथ आसमान में उड़ने लगा। जल्द ही नगर और बगीचे आँखों से ओझल हो गये।

(अगले अंक में समाप्त)

वीर वांबी
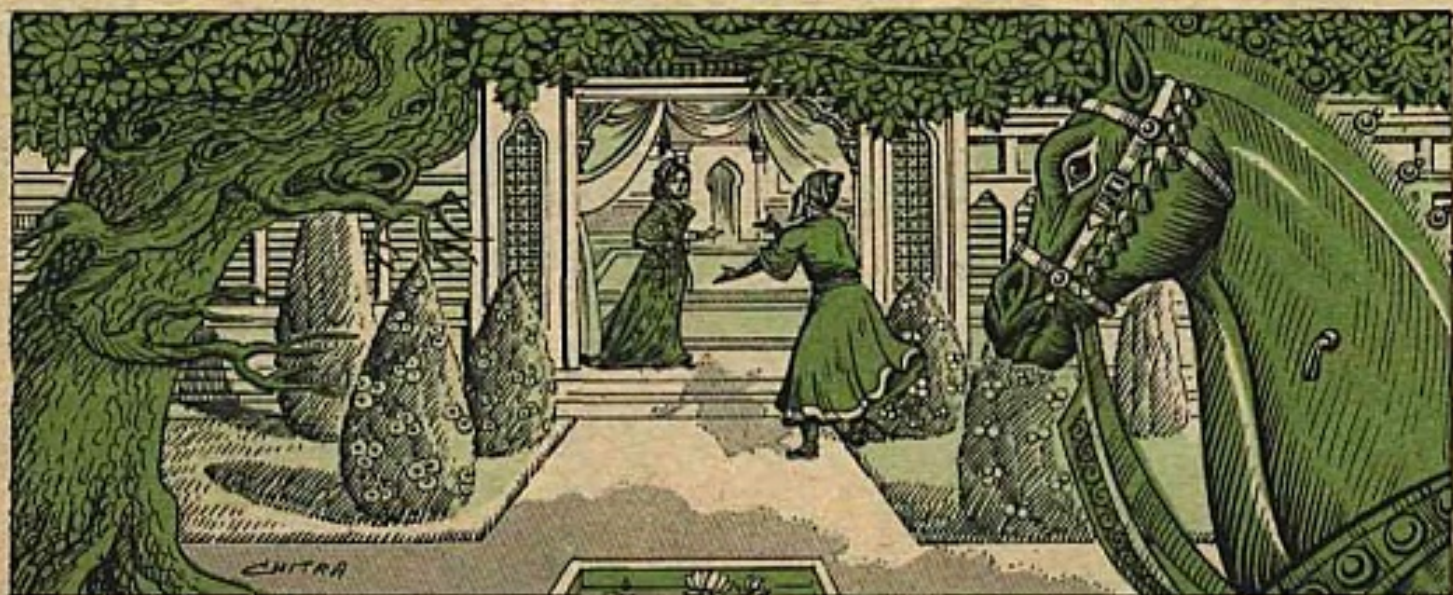
सिंगिवन के नेता की हत्या उसके छोटे भाई चेंगी ने की। उस समय नेता का पुत्र वांबी छोटा लड़का था। वांबी की माँ उस दिन की रात को चेंगी के अनुचरों की आँखों में धूल झोंक कर जंगल के उस पार के एक शहर को भाग गयी। उस शहर के एक मिशनरी फ़ादरी ने उस औरत को आश्रय दिया और वांबी को पाल-पोस कर बड़ा किया। वांबी मजबूत और पहलवान बना। जब वह अट्ठरह साल का हुआ तब उसकी माँ साँप के डसने के कारण मर गयी।

मरने के पहले उस औरत ने वांबी से कहा—"बेटा, तुम जंगल के राजा के बेटे हो। सिंगिवन के तुम्हें राजा बन जाना चाहिए था। तुम्हारे चाचा चेंगी ने तुम्हारे पिता की हत्या की और वह जंगल का नेता बन बैठा है। तुम राजकुमार हो, इसकी निशानी है......" यों कहते अपनी बात पूरी किये बिना वह औरत मर गयी।

उस औरत ने यह बात अपने बेटे और मिशनरी फादरी को पहले इसलिए नहीं बतायी कि चेंगी के अनुचर शहर में भी घूमा करते थे, इसलिए वांबी का पता लग जाने का खतरा था।

अपनी माँ के मुँह से ये बातें सुनने पर उसने अपनी माँ की लाश को छूकर शपथ की कि वह एक पखवारे के अन्दर चेंगी से बदला लेगा।

दूसरे दिन ही वह घर से निकल पड़ा। शिकारियों के पीछे चलकर वह संध्या तक सिंगिवन में जा पहुँचा। वह रात उसने एक पेड़ पर बितायी। सवेरा होने पर वह पेड़ से उतरा। उसी समय एक विचित्र आदमी उधर आ पहुँचा। उसके सर पर सींग थे। बाज के परों और काँटोंवाला

ए. सी. सरकार, जादूगर

किरीट तथा सिंह का चर्म धारण किया हुआ था और उसके हाथ में एक भाला था ।

उस जंगली ने अपने भाले का निशाना बनाकर पूछा–"तुम कौन हो ?"

बांबी बड़ी होशियारी से बोला–"मैं गोरे साहब के शिकारी वृंद का एक आदमी हूँ, रास्ता भटक गया हूँ ।" यों कहते उसने अपनी जेब से सिगरेट जलाने वाला एक लाइटर निकाला और कहा–"यह आग जलाने का यंत्र है ।" तब उसे जलाकर जंगली की ओर बढ़ाया । जंगली ने आश्चर्य के साथ देखा ।

"क्या यह तुम्हें चाहिए ?" बांबी ने पूछा । जंगली ने सर हिलाया ।

"अच्छी बात है, ले लो । क्या तुम मुझे कुछ दिन अपने घर रहने दोगे ?" बांबी ने पूछा ।

"हमारा चेंगी साहब खतरनाक आदमी है ! हमारे देश में दूसरे देश के लोग ठहर नहीं सकते ।" जंगली ने जवाब दिया ।

"लेकिन मुझे तुम्हारे साथ कुछ दिन जरूर रहना पड़ रहा है । हम दोनों दोस्ती कर लेंगे । यह बताओ कि दूसरे देश के लोगों को तुम्हारे नेता क्यों नहीं रहने देते ?" बांबी ने पूछा ।

"वह तो बांबी से डरता है । असली बात यह है कि बांबी हमारे नेता हैं । वह हमारे मरे हुए नेता का इकलौता बेटा है । हमारे मरे हुए नेता कैसे भले आदमी थे । कैसे महान थे । क्रूर चेंगी ने उनका वध किया है । वे मुझसे बहुत प्यार करते थे । मैं उनके दल का प्रमुख व्यक्ति था । इसीलिए चेंगी मुझ पर शक करता है ।" जंगली ने बताया ।

"क्या तुम्हारा नेता इसलिए डरता है कि बांबी जीवित है और वह एक न एक दिन आकर अपना पद माँग बैठेगा ?" बांबी ने पूछा ।

"चेंगी के कुछ अनुचर बताते हैं कि बांबी अब तक जिंदा है । मेरे बाप पर यह इलजाम लगाया गया कि मेरे बाप ने

बांबी और उसकी माँ को हमारे राज्य की सीमा तक गुप्त रूप से पहुँचा दिया है। इसीलिए चेंगी ने मेरे बाप को ज़िंदा जलवा डाला है।" जंगली ने बताया।

"अच्छा, ऐसी बात है? यह बताओ, तुम्हारा क्या नाम है?" बांबी ने पूछा।

"मेरा नाम सिंह दमन डिंगू है।" जंगली ने जवाब दिया।

"डिंगू, अगर बांबी लौट आयेगा तो क्या तुम खुश हो जाओगे?" बांबी ने पूछा।

"मैं भला खुश क्यों नहीं होऊँगा? चेंगी ने मेरे बाप को मारवा डाला है। मैंने उस दुष्ट के साथ बदला लेने की शपथ ली है। लोग भी खुश हो जायेंगे, लेकिन वे सब मांत्रिक की बातों पर ज्यादा विश्वास करते हैं। मांत्रिक चेंगी का समर्थक है। वह कहता है कि उसने अपने मंत्र के बल से बांबी को मार डाला है, यदि वह लौट आयेगा तो भूत बनकर ही लौट आयेगा। तब हमारी फ़सलें और जानवर सब नष्ट हो जायेंगे।" डिंगू ने समझाया।

"तुम लोग मंत्रों पर अब तक यक़ीन करते हो? अगर मैं तुम सब की तक़लीफ़ों को दूर कर चेंगी से तुम लोगों का पिंड छुड़ाने की कोशिश करूँ तो क्या तुम सब मेरी मदद कर सकते हो?" बांबी ने पूछा।

"मैं अपनी जान तक देने को तैयार हूँ।" डिंगू ने दृढ़ता से उत्तर दिया।

"मान्त्रिकों में से कोई वांबी के वापस लौटने पर खुश होने वाला है?" वांबी ने डिंगू से पूछा ।

"चेंगी का दाया हाथ कहलाने वाले वोंगचू को छोड़ बाक़ी सब वांबी को दिल से चाहने वाले हैं। खासकर हमारे पुराने नेता का प्रधान मांत्रिक सींचू को लोग बहुत मानते हैं।" डिंगू ने कहा ।

"तब तो तुम एक काम करो। प्याज काटकर उसका रस निकालो। उस रस से इस कागज पर अपनी भाषा में यों लिखो : "वांबी जिंदा है। उसे नेता बनाओ। यह गोडुडु देवता की आज्ञा है!" इस तरह घास की कूँची से लिखकर काग़ज़ को सुखा दो। तब यह कागज ले जाकर मांत्रिक सींचू को दो। उससे कहो कि वह लोगों से बता दे कि गोडुडु देवता ने उसे सपने में दर्शन देकर बताया है कि नीली पहाड़ पर जाकर वहाँ की शिला की फटास में रहनेवाले काग़ज़ को लाऊँ! उसे आग में झुलसा देने पर उसमें देवता की आज्ञा दिखायी देगी। यह बात लोगों से बता देने के पहले सींचू को जाकर यह काग़ज़ पहाड़ पर रखके आना होगा। तुम सींचू को ही मेरे पास भेज दो। मेरे कहे अनुसार कहने पर क्या होगा, यह सब मैं उन्हें समझा दूँगा।" वांबी ने कहा ।

"अच्छी बात है! हम अभी प्रयत्न शुरू करेंगे। मैं वांबी का दोस्त हूँ। वांबी जिंदा है। वह यहाँ पर आने को तैयार है।" वांबी ने कहा ।

डिंगू जिराफ़ पर से उछलकर नीचे उतरा। अपने साथ की पोशाकें वांबी को दीं। दोनों अंधेरा फैलने तक वहीं रहे।

अंधेरा फैलने पर डिंगू वांबी को अपनी कुटी में ले आया। वांबी ने मंत्र को तंत्र के द्वारा जीतने का निश्चय कर लिया। मिशनरी फ़ादरी के पास उसने कुछ तंत्र सीख लिये थे। उनमें से एक इस वक़्त उसे काम देनेवाला था।

आख़िर वांबी की योजना ठीक से अमल की गयी।

सींचू के साथ कई मांत्रिक लोगों को साथ ले नीली पहाड़ के पास पहुँचे। वहाँ पर सींचू के कहे मुताबिक़ उन्हें काग़ज़ मिला; तब सब लोग गोड्डु देवता के मंदिर में आये और नेता के सामने ही आग जलाई गयी। सींचू ने मंत्र पढ़े। काग़ज़ की सब ने जाँच की। उस पर कुछ लिखा न गया था। इसके बाद उस काग़ज़ को आग के समीप रखा गया। तब उस काग़ज़ पर गेहूँ के रंग में कई अक्षर उभर आये।

"वांबी जिंदा है! उसे नेता बनाओ। यह गोड्डु देवता की आज्ञा है!"

उन अक्षरों को पढ़कर चेंगी अचरज में आ गया। उसके अनुचरों ने ही भाले उठाकर उसे और वोंगचू मांत्रिक को घेर लिया।

"लेकिन वांबी कहाँ पर है? मैंने अपने मंत्र के बल से कभी उसे मार डाला है!" वोंगचू चिल्ला उठा।

"मैं मरा नहीं हूँ, जिंदा हूँ, यहीं पर हूँ।" यों कहते भीड़ को चीरते वांबी आगे आया।

"उसे बंदी बनाओ, यह धोखेबाज़ है।" चेंगी गरज उठा।

मगर सींचू ने ठण्ड़े स्वर में कहा–"यह सचमुच वांबी हो तो मैंने इसकी पैदाइश के समय इसकी बाई कोख के नीचे राजचिह्न लगाया था, वह होनी चाहिए। अगर यह अपना बायाँ हाथ ऊपर उठावे तो मुहर दिखाई देनी चाहिए!"

वांबी ने अपना बायाँ हाथ ऊपर उठाया। उसकी कोख में जलाने का राजचिह्न दिखाई दिया। लोगों ने हर्षनाद किये।

इस पर चेंगी और वोंगचू भागने की कोशिश करने लगे, मगर लोगों ने उन्हें बन्दी बनाया।

"इन दोनों को हमारे राज्य की सीमा से हमेशा के लिए भगा दो।" वांबी ने आदेश दिया।

प्रत्युपकार

शिवराम अधेड़ उम्र का था। उसके एक ही लड़की थी, जो विवाह के योग्य हो गयी थी। कन्या की शादी करनी हो तो कम से कम एक हज़ार रुपयों की ज़रूरत थी। शिवराम के पास इतनी रक़म न थी। वह नंदलाल नामक एक सेठ के यहाँ मुनीम का काम करता था।

शिवराम का पिता अपने समय में संपन्न व्यक्ति था। वह बड़ा दयालू भी था। इसलिए दूसरों की सहायता करने में ही उसने अपना सब-कुछ होम कर दिया और शिवराम के लिए कुछ बचा नहीं रखा। इस वक़्त शिवराम जिस सेठ के यहाँ काम करता था, वह सेठ भी शिवराम के पिता की मदद से व्यापार करके धनी बन गया था।

शिवराम ने अपनी कन्या के लिए पड़ोसी गाँव में एक रिश्ता क़ायम किया। रिश्ता तो बढ़िया था, पर एक हज़ार रुपये दहेज में देना था! शिवराम ने इस विश्वास के बल पर यह रिश्ता क़ायम कर लिया था कि गाँव में उसके पिता के द्वारा सहायता पाये हुए इतने व्यक्तियों के होते उसे एक हज़ार रुपये का उधार मिलने में कोई कठिनाई न होगी। उसने मुहूर्त भी निश्चय कराया था। मगर शिवराम का अन्दाज़ा ग़लत निकला। गाँव के किसी ने भी उसे उधार नहीं दिया। आख़िर सेठ नंदलाल ने भी उधार देने में अपनी असमर्थता प्रकट की।

निश्चित किये गये रिश्ते को तोड़ने के सिवाय कोई दूसरा रास्ता उसके सामने न था। मगर मुहूर्त निर्णय करने के बाद उसे तोड़ना बेइज़्ज़ती होगी। इसलिए शिवराम ने निश्चय किया कि सच्ची हालत वर के पिता को समझाकर अंतिम निर्णय का भार उन्हीं पर छोड़ देना उचित

जेठालाल

होगा। यह सोचकर शिवराम ने पड़ोसी गाँव में जाने का निश्चय कर लिया।

अपनी इस यात्रा के संबंध में किसी को बताये बिना तड़के ही शिवराम पड़ोसी गाँव के लिए चल पड़ा। वह अमावास्या की रात थी। रास्ता ऊबड़-खाबड़ था। उल्लू और सियारों की चिल्लाहटें सुनायी दे रही थीं। चमगीदड़ सर पर उड़ रहे थे। झींगुरों की आवाज कान के पर्दों को फाड़ रही थी। शिवराम को भूतों का डर भी सताने लगा।

उस वक्त शिवराम ने देखा कि उसके आगे कोई व्यक्ति पैदल चला जा रहा है, उसके हाथ में एक थैली थी। उसे देखते ही शिवराम की हिम्मत बंध गयी। उसने तालियाँ बजाकर पूछा—"आगे जानेवाले कौन हैं?"

आगे चलनेवाला व्यक्ति रुक गया। शिवराम के निकट आते ही बोला—"मुझे दीक्षित कहते हैं। मैं पड़ोसी गाँव में जा रहा हूँ। आप कौन हैं?"

"मेरा नाम शिवराम है। मैं भी पड़ोसी गाँव में जा रहा हूँ।" शिवराम ने जवाब दिया। दोनों साथ चलने लगे।

"आप उस गाँव में क्या करते हैं? आपका घर कहाँ?" शिवराम ने पूछा।

"फिलहाल मेरे कोई काम नहीं है। मेरा घर गाँव के बीच पीपल के नीचे है।" दीक्षित ने जवाब दिया।

शिवराम ने दीक्षित को अपनी समस्या बतायी और कहा—"मेरे पिताजी ने हमारे गाँव के कई लोगों की सहायता की थी और वे गरीब हो चुके थे। मगर उनके द्वारा मदद पाये हुए व्यक्तियों में से किसी ने भी वक़्त पर मेरी मदद नहीं की।"

"इससे बढ़कर कृतघ्नता और क्या हो सकती है? तुम्हारे गाँव में सांबशिव नामक एक व्यक्ति थे। उन्होंने मेरी ऐसी मदद की है जिसे मैं अनेक वर्षों के बाद भी भूल नहीं पाता हूँ। मेरी दृष्टि में वे आदमी नहीं, देवता थे।" दीक्षित ने कहा।

शिवराम यह बताने ही जा रहा था कि सांबशिव उसी के पिता हैं, तभी

दीक्षित ने एक थैली शिवराम के हाथ देकर कहा–"जरा यह थैली थाम लो, मैं अभी आ जाता हूँ।" यों कहकर दीक्षित झाड़ियों की ओट में चला गया।

शिवराम ने बड़ी देर तक दीक्षित का इंतजार किया, आखिर निराश हो धीरे से चलते पड़ोसी गाँव में जा पहुँचा।

तब तक सवेरा होने को था। गाँव में जाकर शिवराम ने पीपल का पेड़ और उसके नीचे एक घर देखा। उस घर के सामने चबूतरे पर एक बूढ़ी बैठी हुई थी।

"बूढ़ी माँ, क्या दीक्षित का घर यही है? वे पीछे आ रहे हैं। मुझे जल्दी अपना काम पूरा करके मेरे गाँव लौटना है। वे मेरे हाथ एक थैली दे चुके हैं, उसे तुम्हें सौंपने के लिए यहाँ आया हूँ।" शिवराम ने बूढ़ी से कहा।

"कौन दीक्षित? पच्चीस साल पहले मरे हुए मेरे ससुर?" बूढ़ी ने पूछा। शिवराम अचरज में आ गया। उसने सोचा कि दीक्षित के रूप में उसने कोई भूत देखा है।

शिवराम ने दीक्षित के द्वारा दी गयी थैली खोलकर देखा। उसमें तीन हज़ार रुपये थे।

"बूढ़ी माँ, यह धन तुम्हारा है, इसे ले लो।" शिवराम ने कहा।

"नहीं बेटा, दीक्षितजी ने न मालूम किसी कारण से ये रुपये तुम्हें ही दिये हैं। तुम्हीं रख लो।" बूढ़ी ने समझाया।

इस पर शिवराम ने सोचा कि दीक्षित ने कहा था कि मेरे पिताजी के द्वारा वे सहायता प्राप्त कर चुके हैं, शायद यह उसका प्रत्युपकार होगा। तब बोला–"बूढ़ी माँ, हो सकता है कि तुम्हारी बात सच हो, मगर मुझे इतने रुपयों की जरूरत नहीं है। इसमें से तुम आधे रुपये ले लो।" यों कहकर बूढ़ी के मना करते रहने पर भी शिवराम ने उसे पंद्रह सौ रुपये दे दिये और बाक़ी रुपये उसने रख लिये।

फिर क्या था, शिवराम की कन्या का विवाह वक़्त पर ठाठ से संपन्न हुआ।

अविश्वास

पुराने जमाने की बात है। एक नगर में रामलाल नामक एक हीरे का व्यापारी था। उसने गोविंद नामक एक पहलवान को अपना नौकर नियुक्त किया। लेकिन सेठ रामलाल के मन में गोविंद के प्रति अविश्वास का भाव था। कोई हीरे व जवाहरात खरीदने दूकान पर आते तब सेठ कोई न कोई काम का बहाना बनाकर गोविंद को बाहर भेज देता था। उसका डर था कि हीरों को गोविंद देख लेगा तो वह दगा कर बैठेगा।

कुछ समय बीतने पर गोविंद ने भांप लिया कि सेठ का उस पर विश्वास नहीं है। उसने सोचा कि मौक़ा मिलने पर सेठ की आँखें खुलवानी है।

एक दिन सेठ घर के भीतर भोजन कर रहा था तब दो व्यक्ति दूकान के भीतर प्रवेश करते हुए गोविंद को देख सहम गये।

तब गोविंद उन्हें देखते उठ खड़े होते हुए बोला—"आप क्यों वहीं खड़े हो गये? अन्दर पधारिये।"

उन दोनों आगंतुकों में से एक ने गोविंद के निकट जाकर पूछा—"सेठ साहब क्या कर रहे हैं?"

"भीतर खाना खा रहे हैं।" गोविंद ने जवाब दिया।

उस आदमी ने गोविंद से पूछा—"सेठ के पास कितने मूल्य के हीरे हैं? वे सब कहाँ पर हैं? अगर तुम हमारी मदद करोगे तो हम तुम्हें भी बराबर का हिस्सा देंगे।'

गोविंद ने उन दोनों की ओर परखकर देखा और कहा—"ज़रा ठहर जाइये। मैं अन्दर जाकर सारी बातें जानकर लौटता हूँ।" यों कहकर, गोविंद घर के भीतर गया और बोला—"मालिक, हीरे ख़रीदने के लिए कोई धनी दूर देश से आये हैं

बड़ा भारी सौदा मालूम होता है।" सेठ साहब ये बातें सुनते ही जल्दी भोजन समाप्त कर लौटा और गोविंद से बोला–"तुम ग्राहकों को बिठाकर हमारे गाँव के तालाब के पास जाओ और यह पता लगा आओ कि उसमें कहाँ तक पानी है?"

"अच्छी बात है, मालिक!" यों कहते गोविंद बाहर चला गया।

मौक़ा पाकर बुजुर्गों के वेष में आये हुए चोर घर के भीतर घुस पड़े। सेठ के हाथ और पैर बांध दिये। तिजोरी खोलकर हीरे निकाले, थैलियों में भर दिया। इस पर सेठ चिल्लाने लगा–"गोविंद! गोविंद! जल्दी आ जाओ।" इस पर चोरों ने सेठ के मुँह में कपड़े ठूंस दिये और बाहर निकल पड़े। उधर गोविंद ज्यादा दूर नहीं गया था। वह चोरों की टोह में थोड़ी दूर पर इंतजार कर रहा था, उनके निकट आते ही पूछा–"तुम लोगों का काम पूरा हो गया?"

"हाँ, हाँ, यह तो, तुम्हारा हिस्सा!" चोरों ने कहा।

"अबे चोर के बच्चे! क्या हिस्सा लेने के लिए मुझे तुम जैसे धोखेबाज समझते हो?" यों कहते गोविंद ने थैलियाँ ले जाने वाले चोर के मुँह पर दे मारा। वह नीचे गिरकर खून उगलने लगा। गोविंद दोनों थैलियों के साथ सेठ के घर लौट आया। सेठ गोविंद को देखते ही रोते हुए चिल्ला पड़ा–"गोविंद, तुम आ गये? मेरा सर्वनाश हो गया है। मेरी सारी संपत्ति लूट ले गये हैं।"

"मैंने उन दोनों को अच्छा सबक़ सिखाया है। पहले आप इन थैलियों को तो देख लीजिये कि आपकी सारी संपत्ति है कि नहीं?" यों कहते गोविंद ने सेठ के आगे दो थैलियाँ रख दीं और उसके बंधन खोल दिये। सेठ ने देखा, उसके सारे हीरे और गहने सुरक्षित हैं, तब कहा–"अरे गोविंद, मैंने नहीं सोचा था कि तुम ऐसे विश्वासपात्र हो, मैंने तुम्हारे साथ आज तक अन्याय ही किया है।"

चतुर चित्रकार

प्राचीन काल में भारत के मध्यदेश से एक प्रतिभाशाली चित्रकार यवन देश में गया। वहाँ पर एक अनोखा यंत्राचार्य था। उसने चित्रकार को अपने यहाँ ठहराया। अतिथि की सेवा करने के निमित्त उसने एक यांत्रिक स्त्री को नियुक्त किया जिसे उस शिल्पी ने स्वयं तैयार किया था।

वह यांत्रिक स्त्री चित्रकार के पैर धोकर जा रही थी, उस मूर्ति को देख चित्रकार ने सोचा कि वह सचमुच एक औरत है। उसने उस नारी से कोई सवाल किया, पर नारी ने कोई जवाब नहीं दिया।

इस पर चित्रकार ने उस नारी का हाथ पकड़कर खींचा। उसके धक्के से मूर्ति के भीतर की जोड़ें हिल गयीं और वह मूर्ति नीचे गिर गयी। चित्रकार के यह समझते देर न लगी कि वह एक यांत्रिक स्त्री है। वह यंत्राचार्य की अक्लमंदी पर आश्चर्यचकित हो गया। मगर उस यवन यंत्राचार्य ने उस मूर्ति के बारे में चित्रकार से कुछ भी न बताकर उसका अपमान किया था। यह बात चित्रकार के मन में खटकने लगी। इस अपमान का प्रतीकार करके यंत्राचार्य को भी अपनी अद्भुत प्रतिभा का परिचय देने का चित्रकार ने निर्णय कर लिया।

तत्काल ही चित्रकार ने एक ऐसा चित्र तैयार किया जो फांसी पर लटक रहा हो और देखनेवालों को लगे कि स्वयं चित्रकार ने ही फंदा अपने कंठ में लगाया हो। उस चित्र को अपने कमरे में चित्रकार ने इस तरह लटकाया, जिस से जो भी बाहर से कमरे में झांक कर देखे, उसे तुरंत वह चित्र दिखायी दे, तब चित्रकार कमरे के एक कोने में पड़ी पुरानी लकड़ियों के ढेर के पीछे छुप गया।

ममता अग्रवाल

थोड़ी देर बाद यंत्राचार्य उस कमरे की ओर से आ गुजरा। उसने देखा कि कमरे के द्वार खुले हुए हैं। इसलिए उसने भीतर झाँककर देखा। उसे ज़मीन पर गिरी यांत्रिक मूर्ति और चित्रकार को फाँसी पर लटकते दिखाई दिया।

उस दृश्य को देख यंत्राचार्य डर गया। उसने जो यांत्रिक मूर्ति तैयार की थी, उसके नष्ट हो जाने की ज़रा भी चिंता न थी, लेकिन भारत से आकर अपने घर ठहरे चित्रकार की मौत पर उसे दुःख हुआ। क्योंकि वह अपयश उसी के सर लगेगा। उसने सोचा कि सरकारी अधिकारियों द्वारा इस घटना की तहक़ीकात कराना उचित होगा।

यह सोचकर यंत्राचार्य अपने देश के राजा के दरबार में गया और उसे सारी घटना कह सुनायी। राजा ने इसका पूरा हाल जानने के लिए अपने दरबारी अधिकारियों को यंत्राचार्य के घर भेज दिया।

अधिकारियों ने आकर चित्रकार के कमरे में झाँककर देखा। कमरे में लटकनेवाला चित्रकार का शव उन्हें दिखाई दिया।

वे सोचने लगे कि शव को कैसे उतारा जाय! कुछ लोग चित्रकार के कंठ में फँसे फंदे को काटने के लिए तलवार, भाले और छुरियाँ ले आये।

इस बीच कमरे में छिपा चित्रकार उनके सामने आया। उसे देख सब लोग विस्मय में आ गये।

चित्रकार ने यंत्राचार्य से कहा—"महाशय, यह बात सच है कि आपने यांत्रिक नारी को मेरी सेवा के लिए नियुक्त करके मुझे भ्रम में डाल दिया, मगर आपने अपनी अक्लमंदी के द्वारा मुझ अकेले को ही भ्रम में डाल दिया, लेकिन मैंने अपनी अक्ल का प्रयोग करके आपको तथा राजा के द्वारा भेजे गये अधिकारियों को भी भ्रम में डाल दिया है।"

यह बात सुनकर यंत्राचार्य ने लज्जा के मारे अपना सर झुका लिया।
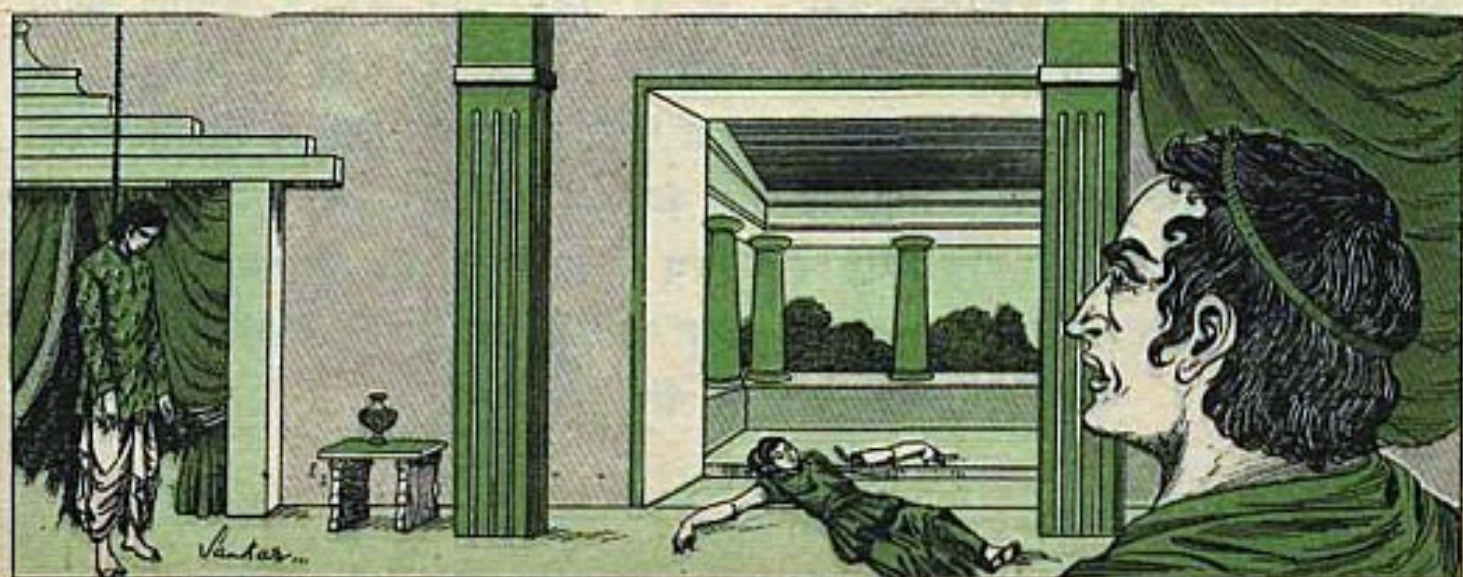
परोपकार

अरुणपुर में वीरमल्ल नामक एक चोर था। वह घरों में सेंध लगाकर तथा रास्ते चलनेवाले मुसाफ़िरों को लूटकर अपना पेट पालता था। उसने अपनी ज़िंदगी में कोई पुण्य कार्य न किया था।

एक दिन रात्रि के समय वह एक घर में सेंध लगा रहा था, तब उसे लगा कि घर के भीतर लोग जाग रहे हैं। दो व्यक्ति बातचीत कर रहे थे। वीरमल्ल ने उनकी बातें सुनीं। एक युवक अपनी माँ से कह रहा था–"माँ, मुझे कल सवेरे पड़ोसी गाँव में जाना है। इसलिए मुझे अपने हिस्से का भात और मिट्टी के हिस्से के भात की दो पोटलियाँ बना कर दो।"

माँ ने कहा–"अच्छी बात है, बेटा!" इसके बाद माँ-बेटे दोनों सो गये।

यह वार्तालाप सुनने के बाद वीरमल्ल अपने सेंध लगानेवाले काम को भी भूल गया। उसे युवक की बातें ज़रा भी समझ में न आयीं। उसका अर्थ समझने की इच्छा चोर के मन में जाग उठी। इसलिए वह सवेरा होने तक वहीं पर खड़ा रहा।

तड़के माँ-बेटे नींद से जाग पड़े। बेटा अपनी यात्रा की तैयारी कर रहा था, माँ ने दो पोटलियाँ बनाकर उसके हाथ दीं।

माँ के हाथ से दो पोटलियाँ लेकर वह युवक घर से चल पड़ा। उसके थोड़ी देर बाद चोर वीरमल्ल भी निकल पड़ा। चलते-चलते दुपहर हो गयी। युवक एक पेड़ की छाया में खाने बैठा। वीरमल्ल भी उसी पेड़ की छाया में जा बैठा।

युवक ने वीरमल्ल को देखा। युवक ने दोनों पोटलियाँ खोल दीं। एक अपने सामने रखी और दूसरी वीरमल्ल के आगे।

युवक का यह व्यवहार देख वीरमल्ल अचरज में आ गया। वह उस युवक को

दीनानाथ वर्मा

बिलकुल जानता तक नहीं, फिर भी उसने बिना पूछे उसके सामने खाना रख दिया। वीरमल्ल ने अपनी जिंदगी में किसी का कोई उपकार नहीं किया था, इसलिए युवक का यह काम उसे विचित्र ही लगा।

वीरमल्ल ने युवक से पूछा—"भाई साहब, मेरी एक शंका है। उसे तुम दूर करोगे तो मैं तुम्हारा दिया यह खाना खा लूंगा।"

"पूछो!" युवक ने जवाब दिया।

"मेरा पेशा तो चोरी करने का है। कल रात को मैं तुम्हारे घर सेंध लगाने आया था, तब मैंने तुम्हारी वे बातें सुनीं जो तुम अपनी माँ से कह रहे थे। मैं उनका अर्थ जानने के लिए ही मैं तुम्हारे पीछे पीछे यहाँ तक चला आया हूँ।" चोर ने कहा।

इस पर युवक ने हँसकर कहा—"देखो, मैं जो खाना खानेवाला हूँ, यह मिट्टी के हिस्से का भात है। तुम्हें जो दे रहा हूँ, यह मेरे हिस्से का भात है।"

"तुम्हारी बातें मेरी समझ में बिलकुल नहीं आ रही हैं। तुम जो खाना खाते हो, वह तुम्हारे हिस्से का खाना होता है, मगर मैं जो खाता हूँ, वह तुम्हारे हिस्से का खाना कैसे होगा?" वीरमल्ल ने पूछा।

"मैं जो खाना खाता हूँ, वह एक जून भी बचा नहीं रहता। वह हजम होकर मिट्टी में मिल जाता है। मगर मैं तुम्हें जो खाना देता हूँ, वह पुण्य कार्य के रूप में हमेशा के लिए मुझे प्राप्त होता है। तुम चोरियाँ करके कमाकर खाते हो, वह खर्च हो जाता है, लेकिन तुमने दूसरों का क्या उपकार किया? तुमने अपने लिए क्या बचा रखा? अब भी सही, परोपकार करते अपने दिन बिताओ।" युवक ने समझाया।

ये बातें सुनने पर मानो चोर की आँखें खुल गयीं। उसने चोरी करना छोड़ दिया। उस दिन से मेहनत के साथ वह काम करता, जो कुछ कमाता, उसमें से दूसरों की सहायता भी करता। इस तरह परोपकार करते अपने दिन बिताने लगा।

परशुराम के विचार सुनने के बाद महामुनि कण्व ने दुर्योधन को समझाया– "दुर्योधन, युधिष्ठिर के साथ समझौता कर लेना तुम्हारे लिए उचित होगा। यह मत समझो कि केवल तुम्हीं शक्तिशाली हो। अन्य लोग भी जब शक्तिशाली हो, तब शक्ति का कोई अर्थ नहीं होता। इस संदर्भ में मैं तुम्हें मातलि की कहानी सुनाता हूँ।"

कण्व यों कहने लगा. इन्द्र के सारथी मातलि के बहुत समय उपरांत एक सुंदर कन्या पैदा हुई। गुणकेशी नामक वह कन्या रूप-सौंदर्य में सब नारियों से कहीं बढ़ कर थी। जब वह युक्त वयस्का हो गयी, तब उसके माता-पिता ने उसका विवाह करना चाहा। पर उसकी पुत्री के योग्य वर कहीं नहीं मिला। देवलोक तथा मानव लोक को ढूंढ़ कर निराश हो मातलि अपनी पुत्री के साथ नागलोक के लिए रवाना हुआ।

रास्ते में नारद से उनकी मुलाक़ात हुई। नारद ने पूछा–"मैं वरुण के यहाँ जा रहा हूँ, तुम लोग कहाँ जाते हो?" मातलि ने कहा–"हम भी वहीं जा रहे हैं।"

वे तीनों वरुण के यहाँ पहुँचे। वरुण ने उनका उचित रूप में सत्कार किया, मातलि के आगमन का समाचार जानकर उन्हें नागलोक में घूमने की अनुमति दी। घूम कर अनेक युवकों को देखा। शेष के

भोगवतीपुर में सुमुख नामक व्यक्ति मातलि को पसंद आया।

मातलि ने नारद से पूछा—"मुनिवर, यह युवक मेरी पुत्री गुणकेशी के योग्य वर है। इसलिए इसे मनवाने की कृपा करें।"

नारद ने मातलि को सुमुख के दादा आर्यक का परिचय कराया और मातलि की कामना बतायी। आर्यक इस प्रस्ताव पर अत्यंत प्रसन्न हुआ, लेकिन चिंता व्यक्त करते हुए बोला—"नारद, मैं इस विवाह के लिए अपनी सम्मति कैसे दूं? हाल ही में गरुड़ ने मेरे पुत्र को मार कर खा डाला और अगले मास में मेरे पोते सुमुख को मारने की शपथ करके चला गया है। गरुड़ जो कुछ कहता है, वह करके ही दम लेते है। इसलिए मैं इस संबंध के लिए अपनी स्वीकृति कैसे दूं?"

यह बात सुनकर मातलि ने सोचते हुए कहा—"महानुभाव, मेरे मन में एक विचार सूझ रहा है। आप अपने पोते सुमुख को मेरे और नारद के साथ इंद्र के पास भेज दीजिये। मैं उसे पूर्ण आयु दिलाने का यत्न करूंगा। यह भी देखूंगा कि गरुड़ के द्वारा इसकी कोई हानि न हो।"

मातलि की बात आर्यक ने मान ली। इस पर मातलि सुमुख तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों को साथ ले इंद्र के पास गया। उस वक़्त विष्णु इंद्र से बातचीत कर रहे थे। मातलि का विचार सुनकर विष्णु ने इंद्र से कहा—"तुम सुमुख को अमृत देकर उसे देवताओं के समान कर दो। नारद और मातलि की इच्छा पूरी होगी।"

गरुड़ को क्रोध दिलाने से डर कर इंद्र ने विष्णु से कहा—"आप ही सुमुख को अमृत दीजिये।"

"तुम समस्त लोकों पर शासन करनेवाले हो। तुम्हें रोकनेवाला ही कौन है? तुम्हीं सुमुख को अमृत दो।" विष्णु ने ज़ोर दिया। लेकिन इंद्र ने सुमुख को अमृत नहीं दिया, बल्कि दीर्घायु दी। इससे

सुमुख को गरुड़ का डर जाता रहा और वह मातलि की पुत्री के साथ विवाह करके आराम से अपने दिन बिताने लगा।

यह समाचार मालूम होने पर गरुड़ क्रोध में आया, इंद्र के पास जाकर बोला– "महाशय, तुमने मेरे मुंह के कौर को छीन लिया। बिना आहार के हम लोग क्या मर नहीं जायेंगे? मेरी शक्ति पर संदेह न करो, मैं तुम्हें अपने पंख के एक 'पर' पर ढो सकता हूँ।"

इस पर विष्णु ने बताया–"हे गरुड, तुम मेरे सामने डींग मत मारो। तुम्हें इस बात का घमण्ड है कि तुम मुझे ढो रहे हो। असली बात तो यह है कि मैं ही स्वयं तुमको ढो रहा हूँ। तुम से बन सका तो मेरे बायें हाथ को तो ढो लो, देखें!" यों कहते विष्णु ने अपना बायाँ हाथ गरुड़ की पीठ पर रखा। उस बोझ को सह न सकने के कारण गरुड़ लुढ़क पड़ा और उसकी आँखें चकरा गयीं। गरुड़ को लगा कि उसके प्राण निकले जा रहे हैं। तब गरुड़ ने विष्णु से क्षमा माँगी और उसकी रक्षा करने का निवेदन किया।

कण्व ने यह कहानी दुर्योधन को सुनाकर कहा–"दुर्योधन, पांडव जब युद्ध में तुम लोगों से जूझ पड़ेंगे, तब तुम लोगों की हालत गरुड़ की सी हो जायगी। तुम

लोगों की रक्षा करने कृष्ण आये हुए हैं। उनके कहे अनुसार मान जाओ और अपने वंश की रक्षा करो।"

दुर्योधन कर्ण की ओर देख उपहास पूर्वक हँस पड़ा और कण्व से बोला– "मुनिवर, भगवान ने इस रूप में मेरा सृजन किया है। मेरा भविष्य जैसा होगा, उसके अनुकूल ही मेरा व्यवहार होगा। मुझे लाख समझाने पर भी क्या फ़ायदा?"

तब नारद ने दुर्योधन से कहा–"दुर्योधन, हित की बातें बतानेवाले कम लोग होते हैं। ऐसे लोगों के वचन सुनकर हठ नहीं करना चाहिए। इसके उदाहरण स्वरूप मैं तुम्हें गालव की कहानी सुनाता हूँ, सुनो।"

नारद यों कहने लगा : गालव विश्वामित्र का शिष्य था। उसने शिक्षा समाप्त करने के बाद गुरुदक्षिणा स्वीकार करने के लिए विश्वामित्र के सामने हठ किया। विश्वामित्र ने अनेक प्रकार से समझाया कि उसे गुरुदक्षिणा की आवश्यकता नहीं है, पर गालव ने नहीं माना।

इस पर खीझकर विश्वामित्र ने गालव से कहा–"तब तो तुम ऐसे आठ सौ सफ़ेद घोड़े ला दो जिनके एक कान काला हो।"

गालव आफ़त में फँस गया। उसके पास धन के नाम पर एक कौड़ी न थी। यह भी वह नहीं जानता था कि ऐसे अश्व कहाँ मिल सकते हैं? उसने भगवान विष्णु का ध्यान किया। तब गरुड़ ने आकर गालव से बताया–"विष्णु भगवान ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है, तुम जहाँ जाना चाहोगे, वहाँ मैं तुम्हें ले जाऊँगा।"

गालव बहुत ही प्रसन्न हुआ। गरुड़ की पीठ पर सवार हो पूर्वी दिशा में जाने का आदेश दिया। गरुड़ तेज़ी से जाने लगा, इससे गालव को कुछ दिखाई नहीं दिया, बल्कि उसका होश उड़ने लगा।

"महाशय, इतनी तेज़ी के साथ मत चलो, मैं घोड़ों की खोज कर रहा हूँ।" गालव ने कहा।

"यह बात तुमने पहले ही क्यों नहीं बतायी?" यों कहकर गरुड़ गालव के साथ ऋषभ नामक पर्वत पर उतरा। वहाँ पर शांडिली नामक तपस्विनी ने उन्हें आतिथ्य दिया।

इसके बाद गरुड़ ने गालव को समझाया–"तुम्हें पहले धन चाहिए। धन के द्वारा घोड़े प्राप्त कर सकते हो। प्रतिष्ठानपुर का राजा ययाति मेरा मित्र है। वह बड़ा ही धनी है। उनके पास जाकर तुम धन माँग लो।" यों समझाकर गरुड़ गालव को ययाति के पास ले गया।

ययाति ने गुरुड़ के द्वारा गालव का वृत्तांत जानकर कहा–"हे मित्र, पहले की भांति मेरे पास धन अधिक नहीं है।

फिर भी मैं अपनी पुत्री माधवी को इस ब्राह्मण के हाथ सौंप देता हूँ। इसकी मदद से गालव की इच्छा पूरी हो सकती है।" यों कहकर ययाति ने गालव के हाथ माधवी को सौंप दिया।

"हे गालव, इस कन्या के द्वारा तुम अपने लिए आवश्यक घोड़ों का संपादन कर लो। मैं चला जाता हूँ।" यों कहकर गरुड़ चला गया।

इसके बाद गालव माधवी को साथ ले अयोध्या के राजा हर्यश्व के पास पहुँचा। राजा ने कहा–"मुनीश्वर, यह कन्या सर्व गुण संपन्न मालूम होती है। मेरे पास घोड़े तो असंख्य हैं मगर तुम जिस प्रकार के घोड़े चाहते हो, वैसे घोड़े केवल दो सौ हैं।"

राजा की बातें सुन माधवी ने गालव को समझाया–"तुम मुझे इसी तरह अन्य राजाओं को देकर आठ सौ घोड़े प्राप्त कर लो।" तब गालव ने माधवी को हर्यश्व के हाथ सौंप कर दो सौ घोड़े ले लिये।

माधवी के द्वारा एक पुत्र को प्राप्त कर हर्यश्व ने उसे गालव के हाथ सौंप दिया।

इसके बाद गालव माधवी को लेकर काशी के राजा दिवोदास के यहाँ पहुँचा। दिवोदास के पास भी दो सौ ही सफ़ेद घोड़े थे। दिवोदास ने भी एक पुत्र पैदा

होने तक माधवी को अपनी पत्नी के रूप में रखा और बाद गालव को लौटा दिया।

तब गालव माधवी को भोज नगर के राजा उशीनर के पास ले गया। उसके भी एक पुत्र पैदा होने तक माधवी को उसकी पत्नी के रूप में रखा, तब उसके यहाँ से भी दो सौ घोड़े लेकर माधवी को साथ ले चल पड़ा।

अब और दो सौ घोड़ों की ज़रूरत थी। गालव नहीं जानता था कि ये घोड़े कहाँ मिल सकते हैं? तभी गरुड़ ने गालव से मिलकर समझाया–"गालव, तुम बाक़ी दो सौ घोड़ों के लिए विशेष श्रम न उठाओ। एक कान कालेवाले सफ़ेद अश्व इस

संसार में और कहीं नहीं हैं, बाक़ी दो सौ घोड़ों के बदले तुम माधवी को विश्वामित्र के हाथ सौंप दो।"

गालव माधवी को विश्वामित्र के पास ले गया और गुरु दक्षिणा के रूप में छे सौ घोड़ों तथा माधवी को ही उसके हाथ सौंप दिया। विश्वमित्र ने उन्हें बड़ी प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार किया।

नारद ने यह कहानी सुनाकर बताया– "दुर्योधन, अपने हठ की वजह से गालव को इतनी सारी यातनाएँ झेलनी पड़ीं। इसलिए तुम अपने हठ को त्याग दो।"

इस पर धृतराष्ट्र ने कृष्ण से कहा– "कृष्ण, यहाँ पर जो कुछ हो रहा है, इससे मैं संतुष्ट नहीं हूँ, लेकिन मैं विवश हूँ। दुर्योधन को समझाने में हम सब असमर्थ हैं, इसलिए तुम्हीं इसे समझाओ।"

तब कृष्ण ने दुर्योधन को यों समझाया– "दुर्योधन, तुम जो कुछ करना चाहते हो, यह तुम्हारे लिए शोभा नहीं देता। पांडवों से मैत्री करने पर तुम्हें धर्म, अर्थ और काम की प्राप्ति होगी। युद्ध के द्वारा सर्वनाश होगा। तुम संधि करोगे तो तुम्हारे हितैषी सब प्रसन्न हो जायेंगे।"

भीष्म और द्रोण ने भी कृष्ण के वचनों का समर्थन किया। विदुर ने दुर्योधन से कहा–"बेटा, तुम पर जो भी बीते, मैं चिंता नहीं करता। मैं तुम्हारे माता-पिता गांधारी और धृतराष्ट्र की अधिक चिंता करता हूँ। तुम जैसे पुत्र को जन्म देने के कारण वे निराश्रय होने जा रहे हैं।"

अंत में धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को समझाया–"बेटा, कृष्ण के साथ मैत्री करना हमारे लिए सब तरह से हितकारी है। तुम इस मौक़े से चूकने की गलती न करो।"

दुर्योधन को किसी की भी सलाह पसंद न आयी। उसने कृष्ण से कहा–"सब लोग मेरी ही निंदा कर रहे हैं। तुमने पांडवों के प्रति पक्षपात दिखाया, मैं नहीं जानता कि मैंने कौन-सा महापाप किया है?

पांडव यदि अपनी इच्छा से जुआ खेलकर वनवास में गये तो क्या यह मेरा दोष है? पांडव हमारे साथ युद्ध के लिए तैयार हो गये हैं! मैं इंद्र से भी नहीं डरता। यदि पांडव क्षत्रिय धर्म से प्रेरित होकर युद्ध के लिए सन्नद्ध हो जाते हैं, तो हम लोग युद्ध में मरने के लिए भी तैयार हैं। मैं जब अबोध था, तभी पांडवों को राज्य दिया गया था। मेरे जीवित रहते यह राज्य पांडवों को वापस नहीं मिल सकता। सूई की नोक के बराबर ज़मीन भी मैं उन्हें नहीं दे सकता। इसलिए मुझे समझाने की कोशिश करने से कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध न होगा।"

"दुर्योधन, तुम्हारी कामना की पूर्ति होगी और तुम्हें वीर स्वर्ग प्राप्त होगा! तुमने सब प्रकार से पांडवों के साथ अन्याय किया और अब बताते हो कि तुम्हारा कोई दोष नहीं है। तुम्हारा पतन निश्चित है। मैत्री भाव से मांगने पर तुम पांडवों के पिता का राज्य उन्हें नहीं लौटा रहे हो? भविष्य में वे लोग पूरे राज्य पर अपना अधिकार कर लेंगे।" कृष्ण ने बताया।

इस पर दुर्योधन क्रोध में आकर सभा भवन से चला गया। उसके पक्ष के सभी लोग उसके पीछे चले गये।

तब कृष्ण ने धृतराष्ट्र को समझाया—"महाराज, यदि आप अपने वंश के नाश होने से रोकना चाहते हैं तो आप सब बुजुर्ग एक होकर दुर्योधन आदि को बंदी बनाइये और पांडवों के हाथ सौंप कर उनके साथ संधि कर लीजिये।"

धृतराष्ट्र कृष्ण की बातें सुन घबरा गया। उसने गांधारी के द्वारा दुर्योधन को मनवाने का प्रयत्न किया, लेकिन इसका कोई प्रयोजन न निकला।

दुश्शासन ने दुर्योधन के पास जाकर बताया कि दुर्योधन तथा उसके मंत्रियों को बन्दी बना कर पांडवों को सौंपने जा रहे हैं, तब सुझाया—"हम लोग इसके पहले ही कृष्ण को बन्दी बनाकर पांडवों को निर्बल बना लेंगे।"

यह बात सात्यकी को मालूम हो गयी, उसने कृतवर्मा से बताया–"अभी जाकर यह समाचार कृष्ण को दे लौट आता हूँ। तुम इस बीच हमारे सैनिकों को सभा के द्वार पर तैयार रखो।" यों कहकर सात्यकी सभाभवन में गया। उसने दुर्योधन आदि के षड़यंत्र का समाचार कृष्ण को दिया। इसके बाद उसने यह समाचार सभा में उपस्थित सभी प्रमुख व्यक्तियों को सुनाया।

धृतराष्ट्र ने यह खबर सुनते ही दुर्योधन को सभाभवन में बुलवाकर उस खरी-खोटी सुनायी। विदुर ने भी उसे डांटा। कृष्ण ने तब कहा–"आप लोग समझते हैं कि यहाँ पर मैं अकेला हूँ। किंतु मेरे साथ पांडवों की समस्त सेना, अंधक एवं वृष्टि वंश के वीर, आदित्य, रुद्र, वसु तथा ऋषी भी हैं। आप लोग स्वयं देख लीजिये।"

दूसरे ही क्षण कृष्ण के शरीर में सब लोग एक इंच के प्रमाण में विद्युत् की भांति चमकते, आग उगलते दिखाई दिये। कृष्ण के भाल पर ब्रह्मा, वक्षस्थल पर एकादश रुद्र, भुजाओं में दिक्पाल, मुख मण्डल पर अग्नि दर्शित हुए। उनके हाथों में आदित्य, साध्य, वसु, अश्विनी देवता, मरुत्त, इंद्र, विश्व देवता, गंधर्व, यक्ष और राक्षस-प्रमुख भी दिखाई दिये। दायें हाथ में गांडीवधारी अर्जुन, बायें हाथ में हलधर बलराम, पीठ पर पांडव भी दर्शित हुए। कृष्ण एक हज़ार हाथों में आयुध धारण कर दिखाई देने लगे। उनके कान, आँख एवं नाक से अग्नि-ज्वालाएँ निकलीं। उनके भीतर स्वर्ग, मर्त्य एवं पाताल लोक दिखाई दिये। उनकी आँखों में सूर्य और चन्द्रमा, तथा केशों में नक्षत्र चमक रहे थे।

इस भयंकर रूप को न देख सकने की दशा में समस्त सभासदों ने अपने नयन मूंद लिये। कृष्ण के द्वारा दिव्य दृष्टि पाकर द्रोण, भीष्म, विदुर और संजय ने कृष्ण के विश्व रूप के दर्शन किये।

"यह कोलाहल कैसा?" धृतराष्ट्र ने पूछा। इस पर कृष्ण ने धृतराष्ट्र को भी दिव्य दृष्टि प्रदान की।
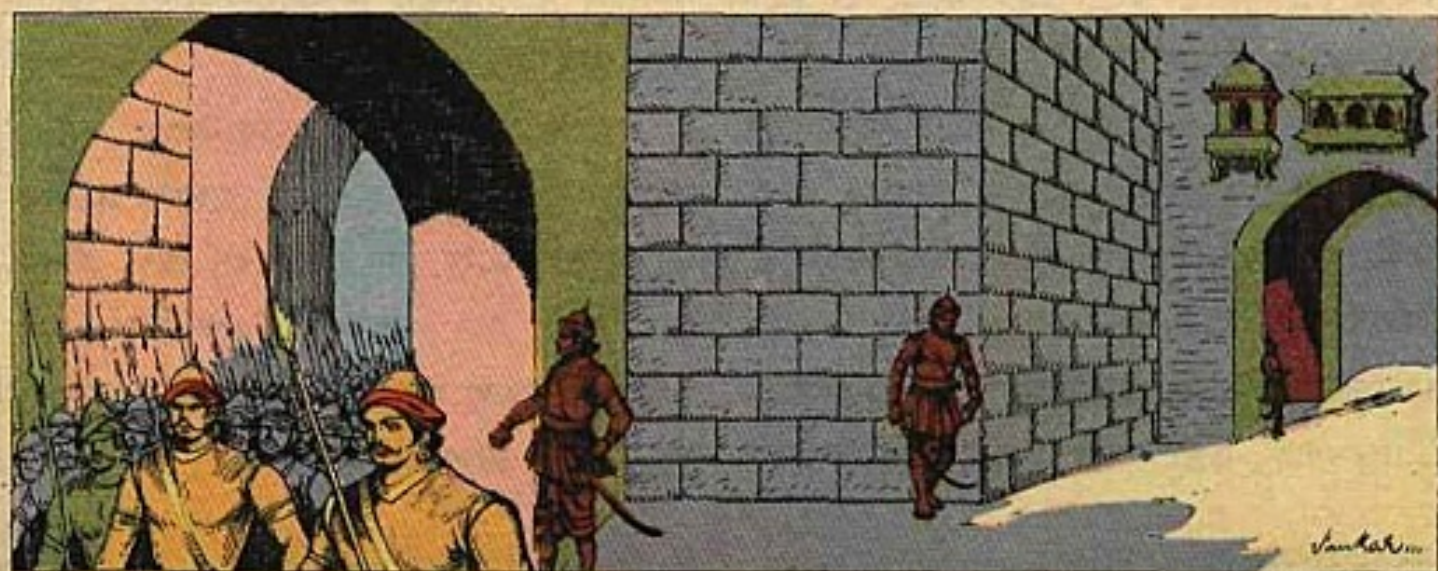
शिव-लीलाएँ

[४]

बदरिकाश्रम में मुनि दुर्वास तप किया करता था। एक दिन दुपहर के समय वह देवताओं की अर्चना समाप्त कर हविश के शेष को हिरण के बच्चों को खिला रहा था, तभी तुंबुर नामक एक प्रमथ अपनी पत्नी के साथ आकाश मार्ग में जा रहा था। उसने हिरण के बच्चों को देख चुटकियाँ बजायीं। इससे हिरण के बच्चे घबरा कर भाग गये। क्रोधी दुर्वास ने तुंबुर को मनुष्य-जन्म धारण करने का शाप दिया।

तूंबुर डर गया। विमान से उतर कर मुनि दुर्वास से बोला–"मुनिवर, मैंने आपके हिरण के बच्चों को देख प्रसन्न हो चुटकियाँ बजायीं, परिणाम स्वरूप वह कार्य शाप बनकर मेरे गले लग गया। आपका शाप बदल नहीं सकता, इसलिए मैं मानव का जन्म धारण करूँगा, लेकिन आप इतना मात्र अनुग्रह कीजिये कि मानव जन्म के समय मुझे शिवजी के प्रति भक्ति प्राप्त हो।" दुर्वास ने उसकी इच्छा की पूर्ति करने का आश्वासन दिया।

दुर्वास के शाप के परिणाम स्वरूप तुंबुर कांचीपुर के एक वैश्य परिवार में चिरुतोंड नाम से पैदा हुआ। उसकी पत्नी भी तिरुवेंगनांचि नाम से मानव-जन्म धारण कर चिरुतोंड की पत्नी बनी। उनके सिरियाल नामक एक पुत्र पैदा हुआ।

चिरुतोंड वीर शैवमत का अनुयायी हो एकाम्रनाथ की अर्चना करते शिवभक्तों को मुँह मांगी वस्तु हर वक़्त दिया करता था। यह उसका व्रत बना हुआ था।

एक दिन उसके घर एक शिवभक्त आ पहुँचा। चिरुतोंड को आशीर्वाद दिया। उसके द्वारा अर्चना पाकर बोला–"वत्स,

अंतिम पृष्ठ का चित्र

प्रति दिन में गन्ने के रस से शिवजी का अभिषेक करता हूँ, यह मेरा व्रत है। इसलिए मुझे हाथ के द्वारा कोल्हू में तैयार किया रस छे पंसेरी चाहिये।"

चिरुतोंड परम प्रसन्न हुआ। रुपये लेकर गन्ने खरीदने चल पड़ा। छे पंसेरी रस निकालना हो तो सौ गन्ने की जरूरत होती है। इसलिए चिरुतोंड ने सौ गन्ने खरीद कर उसका बण्डल बनाया। मगर वह बण्डल उठाना उसके लिए संभव न हुआ। तब शिवजी मानव रूप में आकर वह बण्डल ढो लाये और गायब हो गये।

इस दृश्य को देख चिरुतोंड चकित रह गया। उसने अपने हाथ से कोल्हू में गन्ने का रस फेर लिया। छे पंसेरी सर निकाल कर अतिथि को दिया। इस तरह गन्ने के रस से शिवजी का अभिषेक हुआ।

कैलास में पार्वती ने शिवजी के शरीर को पसीने से तर देख इसका कारण पूछा। शिवजी ने उसे चिरुतोंड का समाचार सुनाकर कहा–"मेरा भक्त गन्नों का बण्डल उठा नहीं पा रहा था, मैंने उसकी मदद दी।"

उस भक्त को देखने की पार्वती ने भी इच्छा प्रकट की। तब शिवजी ने इन्द्र को आदेश दिया कि वह कांचीपुर के प्रदेश में लगातार पानी बरसावे, कांचीपुर में इक्कीस दिन तक लगातार पानी बरसा और बाइसवें दिन वर्षा थम गयी। ये तीनों सप्ताह चिरुतोंड शिवभक्तों को रात-दिन खाना खिलाता रहा। ईंधन खतम हो गया तो कपड़े तेल में भिगोकर जलाया और रसोई बन गयी। पर उसने अपने व्रत में विघ्न पड़ने नहीं दिया।

मगर आश्चर्य की बात यह थी कि जिस दिन वर्षा थम गयी, उस दिन चिरुतोंड के घर एक भी अतिथि न रहा। चिरुतोंड का यह नियम था कि कम से कम एक शिवभक्त को खाना खिला कर ही तब खाना खावे। उसने दुपहर के वक़्त बाहर आकर देखा, घर के दालान में चबूतरों पर एक शिवभक्त भी नहीं है। इसलिए शिवभक्तों की खोज में

चिरुतोंड घर से निकल पड़ा। क़िले के अहाते में उसे एक शिवभक्त भी दिखाई न दिया, तब वह क़िला पारकर बाहर गया और शिवभक्तों की खोज करने लगा।

एक बगीचे के निकट एक उजड़े हुए मंदिर में एक वृद्ध दंपति उसे दिखाई दिया। बूढे के केश सफ़ेद हो गये थे। उसके कंठ में रुद्राक्षमाला थी। चेहरे पर भभूत की रेखाएँ थीं। बूढी अंधी थी, बाघ की खाल पर लेटे हुए बूढे के पैर दबा रही थी।

चिरुतोंड ने हाथ जोड़कर उन्हें प्रणाम किया और उनसे विनती की–"आज आप दोनों मेरे घर पधारिये, शिव की अर्चना करके मुझे कृतार्थ बनाइये।"

इस पर वृद्ध ने कहा–"एक वर्ष से मैं शिवजी के प्रति अन्न त्याग कर व्रत कर रहा हूँ। मनुष्य के मांस के द्वारा ही इस व्रत की समाप्ति हो सकती है। नरपशु ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य जाति में से किसी भी जाति का हो सकता है। वह छोटी अवस्था का हो और स्वस्थ हो। उसके माता-पिता स्वयं अपने पुत्र का वध करके उसका मांस पकावे और वे ही वह मांस परोसे। तब तुम्हें भी मेरी पंक्ति में बैठकर खाना होगा।"

"मुझे चिरुतोंड कहते हैं। शिवभक्तों के व्रतों का आचरण कराना ही मेरा व्रत है।

आप जैसा चाहते हैं, वैसा भोजन मैं आपको खिलाऊँगा। मेरे घर पधारिये।" चिरुतोंड ने निवेदन किया।

"तुम भले ही मान ले, पर तुम्हारी पत्नी को भी तो मान लेना चाहिये।" वृद्ध ने पूछा। चिरुतोंड ने घर लौटकर सारी बातें अपनी पत्नी को सुनायीं।

"हम लोग तो अपना मांस भी काटकर देने के लिए तैयार हैं। आप तुरंत उन लोगों को हमारे घर बुला लाइये।" तिरुवेंगनाचि ने समझाया।

इस बीच बूढ़े के रूप में स्थित शिवजी दूसरे वेश में सिरियाल की पाठशाला में पहुँचा और उससे कहा–"बेटा, तुम्हारे

पिता बहुत ही दुष्ट हैं। वह तुम्हें मारकर किसी योगी को खिलानेवाला है। इसलिए तुम यहाँ से जल्दी भाग जाओ।" सिरियाल को शिवजी ने डराया।

"महाशय, आपका कहना मुझे बड़ा ही विचित्र मालूम होता है। हमारे बुजुर्गों ने बताया है–'परोपकार्थ मिदम् शरीरम्' दधीची, शिबि इत्यादि क्या अज्ञानी थे?" सिरियाल ने उत्तर दिया।

थोड़ी देर बाद चिरुतोंड मंदिर में लौट आया और बूढ़े ब्राह्मण को अपने कंधों पर उठाकर अंधी नानी का हाथ पकड़कर चलाते घर पहुँचा।

माता-पिता ने सिरियाल का स्नान कराया, उसे सब प्रकार से अलंकृत कर पूछा–"बेटा, क्या तुम शिवयोगी का आहार बनने के लिए तैयार हो?"

"मैं खुशी से उनका आहार बनने के लिए तैयार हूँ।" सिरियाल ने उत्तर दिया।

इसके बाद माँ ने अपने पुत्र को गोद में लिटाया। चिरुतोंड ने अपने पुत्र का वध किया। सिरियाल का मांस पकाकर उस दंपति ने उस वृद्ध-दंपति को परोसा।

तब बूढ़े ने चिरुतोंड से पूछा–"अब तुम और तुम्हारा पुत्र दोनों मेरी पंक्ति में बैठकर खाना खा लो।"

"मेरा बेटा कहीं चला गया होगा। रसोई ठण्डी हो जायगी, आप खाना खा लीजिये।" चिरुतोंड ने कहा।

"तुम अपनी पत्नी से कहो कि वह अपने बेटे को पुकारे, लड़का चला आयगा।" वृद्ध ने सुझाया।

तिरुवेंगनाचि ने पुकारा–"बेटा, सिरियाल यहाँ आ जाओ।"

उसी समय सिरियाल दौड़ता हुआ घर के भीतर आया। चिरुतोंड ने वृद्ध दंपति की ओर देखा तो उसे पार्वती और परमेश्वर अपने असली रूप में दिखाई दिये। वे चिरुतोंड की भक्ति पर प्रसन्न हुये और उन्होंने चिरुतोंड के पूर्व जन्म का वृत्तांत सुनाया।
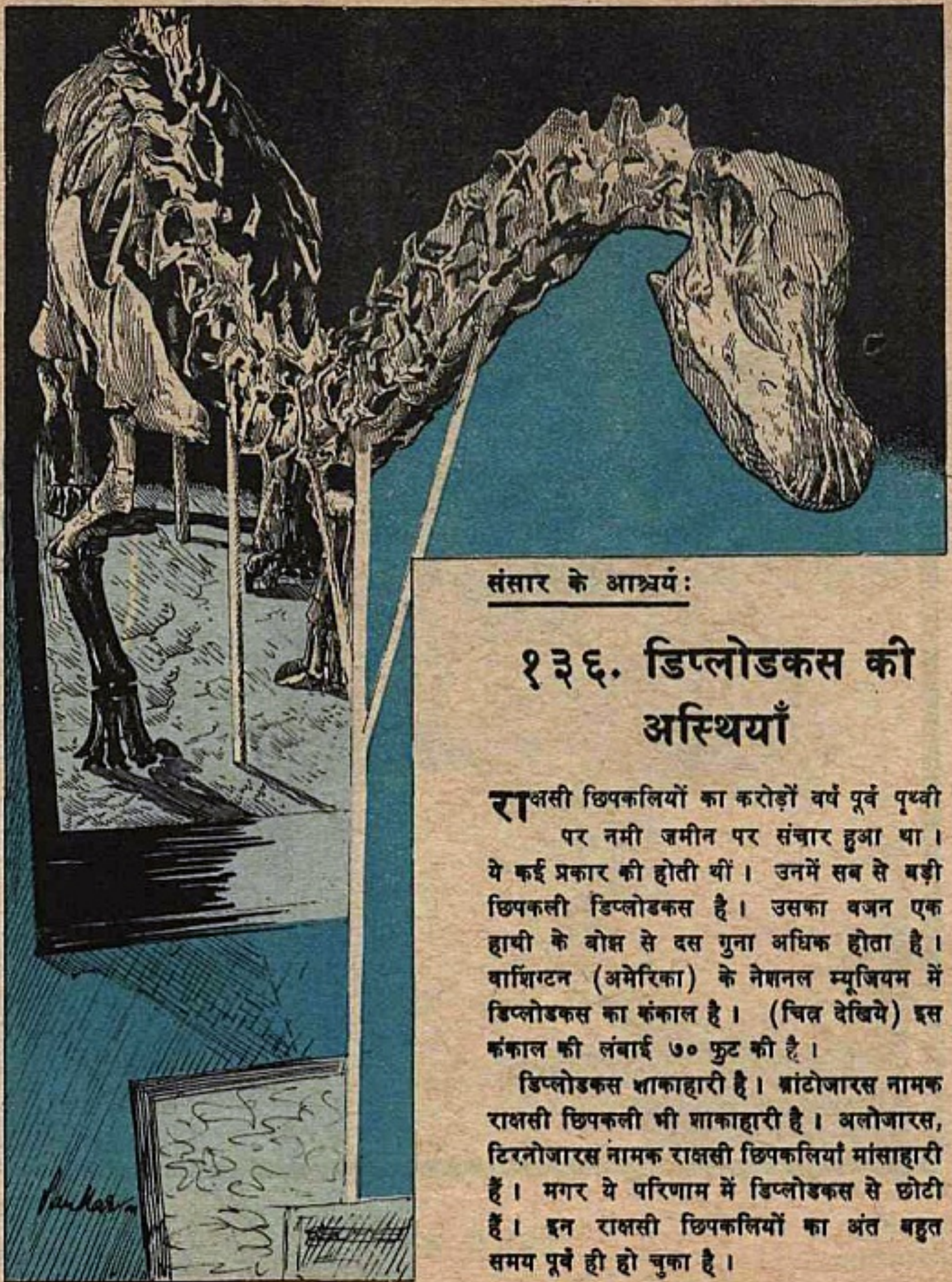
संसार के आश्चर्य :

१३६. डिप्लोडकस की अस्थियाँ

राक्षसी छिपकलियों का करोड़ों वर्ष पूर्व पृथ्वी पर नमी जमीन पर संचार हुआ था। ये कई प्रकार की होती थीं। उनमें सब से बड़ी छिपकली डिप्लोडकस है। उसका वजन एक हाथी के बोझ से दस गुना अधिक होता है। वाशिंगटन (अमेरिका) के नेशनल म्यूजियम में डिप्लोडकस का कंकाल है। (चित्र देखिये) इस कंकाल की लंबाई ७० फुट की है।

डिप्लोडकस शाकाहारी है। ब्रांटोजारस नामक राक्षसी छिपकली भी शाकाहारी है। अलोजारस, टिरनोजारस नामक राक्षसी छिपकलियाँ मांसाहारी हैं। मगर ये परिणाम में डिप्लोडकस से छोटी हैं। इन राक्षसी छिपकलियों का अंत बहुत समय पूर्व ही हो चुका है।

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत परिचयोक्ति

गागर में जल!

प्रेषक : हरीशकुमार

Photo by D. N. Prasad

१२८/३८२ के ब्लाक,
किदवाय नगर, कानपुर

पानी का नल !!

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

फोटो-परिचयोक्ति-प्रतियोगिता :: पुरस्कार २०)

★ परिचयोक्तियाँ मई ५ तक प्राप्त होनी चाहिए ।

★ परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबंधित हों, पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ जुलाई के अंक में प्रकाशित की जायंगी !

चन्दामामा

इस अंक की कथा-कहानियाँ-हास्य-व्यंग्य

दूसरा मुखपृष्ठ: **जानवर**

तीसरा मुखपृष्ठ: **बछड़े**

Printed by B. V. REDDI at The Prasad Process Private Ltd., and Published by B. VISWANATHA REDDI for Chandamama Publications, 2 & 3, Arcot Road, Madras-26. Controlling Editor: 'CHAKRAPANI'

भारत की सर्वप्रथम और सर्वाधिक लोकप्रिय

ज्ञान भारती बाल पॉकेटबुक्स

पढ़ने में रोचक • देखने में सुन्दर • दामों में सस्ती

- देवीदास या विचित्र कुमार ?
- चुगुल-खोर मैना
- मिस्टर चम्पत
- आखिरी छलांग
- जगत् गुरु शंकराचार्य
- दिल्ली में कौवे

उन्नीसवां सेट

घरेलू पुस्तकालय योजना के नियम और लाभ

आप बिना डाक-खर्च घर बैठे पुस्तकें पा सकते है ।

दो रुपया मनी आर्डर द्वारा भेजकर घरेलू बाल पुस्तकालय योजना के सदस्य बन जायें और प्रति दूसरे माह छह रंग-बिरंगी बाल पाकेट बुक्स ६·०० रु० की वी० पी० द्वारा घर बैठे प्राप्त करें।

जनवरी मास में एक डायरी मुफ्त, ज्ञान भारती पत्रिका मुफ्त, ग्यारह सेट छुड़ाने पर एक सेट मुफ्त, किताबें घर बैठे मिलेंगी, डाक खर्च नहीं देना होगा, ज्ञान भारती पत्रिका में आपकी लिखी कहानियां छपेंगी, आकर्षक प्रमाण-पत्र, आपके सुझावों का स्वागत किया जायगा।

ज्ञान भारती का **धर्मकथा** अंक **मुफ़्त** मंगाने के लिये पत्र लिखें

ज्ञानभारती बाल पुस्तकालय योजना (च) विशेश्वरनाथ रोड, लखनऊ (उ० प्र०)

ADVENG

बताइये तो, किस बच्चे की मां
उसे इनक्रिमिन* देती है?
आपका अंदाज सही है!
ड्राप्स—१ महीने से
२ वर्ष के बच्चों के लिए
सिरप—१२ वर्ष तक के
बच्चों के लिए
यह टानिक है महान!
बढ़ते बच्चों के लिए वरदान
इनक्रिमिन* टानिक
अधिक खुराक को अधिक
विकास में बदल देता है
डाक्टरों का विश्वास पात्र नाम
Lederle
सायनामिड इंडिया लिमिटेड का एक विभाग।
* अमेरिकन सायनामिड कम्पनी का रजिस्टर्ड ट्रेड नाम
Incremin syrup
TONIC APPETITE STIMULANT
SISTA'S-INC-1011 HIN

CHANDAMAMA (Hindi) MAY 1973 Regd. No. M. 5452

शिव-लीलाएँ